जीवनीय

लोक स्वास्थ्य परम्पराओं की त्रैमासिक पत्रिका

वर्ष
अंक २
१९८९ ई

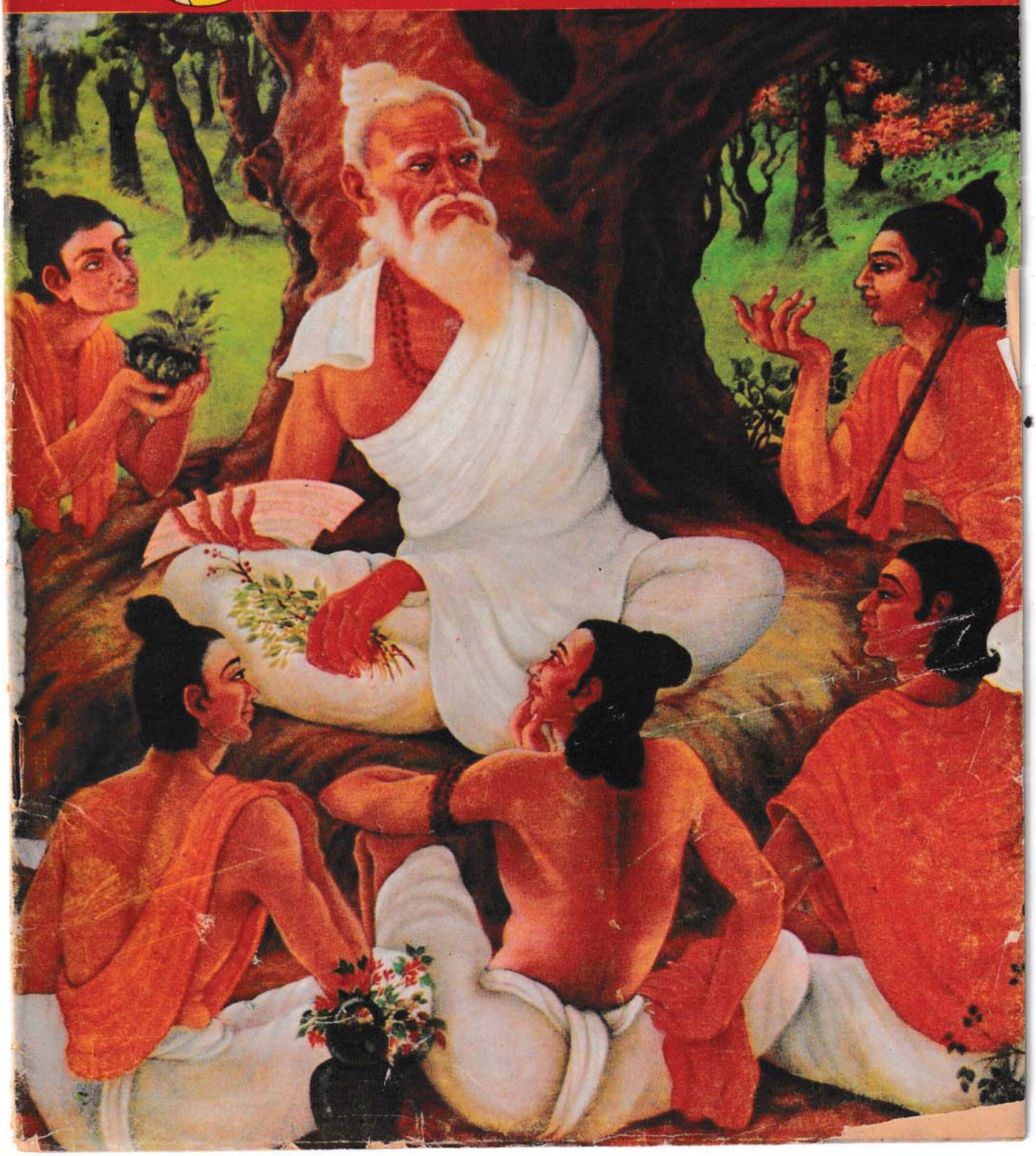

कार्यकारी सम्पादक
डा. नरेन्द्र नाथ मेहरोत्रा

सम्पादक मंडल
प्रो. राजकिशोर मिश्र
डा. हरि प्रकाश शर्मा
वैद्य ना.द. मिश्र
वैद्य लक्ष्मीकान्त कुलकर्णी
वैद्य उमेश चन्द्र शर्मा
वैद्य अरविन्द शुक्ल
हकीम ए.ह. कुरेशी
डा. मोहन बडे
डा. रवि कुमार शर्मा
डा. पू. ना. मिश्र
डा. (श्रीमती)शैला चन्द्रा
पं. काशीनाथ गोपाल गोरे
श्री रोमेलो मालवीय
डा. नि.च. शाह
संयोजक
पं. माधवाचार्य
साज-सज्जा
श्री अली कौसर
कार्टून
श्री प्रदीप कुमार श्रीवास्तव

संपादकीय सलाहकार समिति

वैद्य भगवान दाश, नई दिल्ली
वैद्य विवेकानन्द पाण्डे, नई दिल्ली
वैद्य (श्रीमती)श. कोपिकर, बम्बई
वैद्य रमेश म. नानल, बम्बई
वैद्य नरेन्द्र सो. भट्ट, बम्बई
प्रो. रामहर्ष सिंह, वाराणसी
डा. गीता बामेजई, वाराणसी
हकीम सै. खलीफतुल्लाह, मद्रास
प्रो. राजकिशोर मिश्र, लखनऊ
डा. मनमोहन लाल, लखनऊ
डा. हरि प्रकाश शर्मा, लखनऊ
वैद्य भा.वि. साठे, नागपुर
श्री गंगा राम जानू आवारी, नासिक
वैद्य ह. श्री. कस्तूरे, गांधीनगर
वैद्य टी.आर. आनन्दलवार, मैसूर
डा. उमा, बंगलूर
सिद्ध वैद्य के. नटराजन, मद्रास
हकीम सैफुद्दीन अहमद, मेरठ
डा. शिव कुमार मिश्र, जौनपुर

इस पत्रिका के लिए कापार्ट से मिले अनुदान के हम आभारी हैं।

केन्द्रीय औषधि शोध संस्थान, लखनऊ से साभार

अनेनोपदेशेन नानौषधिभूतं जगति किंचिद् द्रव्यमुपलभ्यते।
तां तां युक्तिमर्थ च तं तमभिप्रेत्य ।।१२।। च.सू. २ ६

अर्थात्

"इस ज्ञान की सहायता से यह स्पष्ट है कि विश्व में ऐसा कोई पदार्थ नहीं है जिसका युक्ति पूर्वक प्रयोग करने पर वह किसी न किसी रूप में औषधि का काम न करता हो।'

जीवक के विद्यार्थी जीवन की यह घटना इस बात का संकेत है कि भारतीय परम्परा में वनौषधियों को कितना महत्व दिया जाता था।

संपादकीय

जीवनीय का दूसरा 'वर्षा अंक' आपके सम्मुख प्रस्तुत है। यद्यपि यह अंक भी समय से नहीं निकल सका है, हमें आशा है कि नवजात 'जीवनीय' शीघ्र ही अपनी छोटी-मोटी समस्याएं दूर करके आपके आंगन में किलकारियां बिखेर सकेगा। जैसा हमने आपसे वायदा किया था, आपको जीवनीय के इस अंक में कुछ परिवर्तन अवश्य मिलेगा। यद्यपि हम अपने सभी वायदे एक साथ पूरे नहीं कर सके हैं। इस अंक में कुछ वनस्पतियों के रंगीन चित्र हम दे रहे हैं। यूनानी हकीमों के कुछ लेख भी आपके सम्मुख हैं।

जीवनीय धीरे-धीरे क्या रूप लेगा यह आप पाठकों पर काफी कुछ निर्भर करेगा। यद्यपि हमें इस प्रयास के लिए साधुवाद के अनेकों पत्र व संदेश मिले हैं, आलोचनात्मक सुझाव कम ही आये हैं। वैसे इन सुझावों के आधार पर ही हमने शब्दकोष देना आरम्भ किया है और कुछ नये स्तम्भ भी जोड़े हैं। कुछ द्रव्यों पर आधुनिक विज्ञान की सहायता से की गयी खोजों का भी हम और विवरण देने का प्रयास करेंगे (जैसा इस बार नीम से शुरू किया है)। पाठकों को हमारा सुझाव है कि जीवनीय के प्रत्येक अंक को वे सम्भाल कर रखें क्योंकि कई बार पिछले अंकों का भी हवाला देंगे। वैसे भी, जीवनीय के लेख ज्ञान पर आधारित होते हैं अतः यह आवश्यक नहीं है कि हम अगले वर्ष के अंकों में फिर जानकारियां दोबारा दें।

जैसा हमने पिछले अंक में भी लिखा था विश्व भर में वनौषधियों के उपयोग में रुचि बढ़ रही है और लोगों का प्रकृति से सान्निध्य में रुझान है। पर हमें यह कदापि नहीं भूलना चाहिए कि विश्व के अधिकांश देश (और उनकी अधिकांश जनता) गरीबी की चपेट में होने के बावजूद आधुनिकता की दौड़ में लगे हैं। या कहीं सत्य यह तो नहीं है कि 'उपभोक्तावाद' संसाधनों और अर्थव्यवस्थाओं के नियंत्रण के लिए अधिकांश देशों को मशीनी युग की 'आधुनिकता' में धकेले दे रहा है। हां, यह तभी सम्भव है जब इन देशों के नीतिवेत्ता या प्रभावशाली तत्व कुछ सुविधाओं और भोग विलासों के निहित स्वार्थ में इस झूठी आधुनिकता की सहायता करते रहें।

अन्यथा हम इस सच को कैसे गले के नीचे उतार सकते हैं कि देश की ८० प्रतिशत जनता तक स्वास्थ्य की सुविधाएं न पहुंचा सकने के बावजूद सरकारी कार्यक्रमों में बड़े-बड़े उपकरणों से सुसज्जित अस्पतालों के बनाने को प्राथमिकता मिलती जा रही है। सामुदायिक स्वास्थ्य की योजनाओं में भी अधिकतर पूंजी नये साज-सामान (वाहनों) व औषधियों के बनाने या आयातित करने में जा रही है। स्वास्थ्य रक्षा में समाज की भागीदारी की कल्पना महज एक नारा बनती जा रही है। यदि देश की स्वास्थ्य योजनाओं का ९५% से अधिक बजट केवल आधुनिक स्वास्थ्य और चिकित्सा सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए खर्च किए जाने पर भी वे केवल २०-२५ प्रतिशत लोगों तक ही पहुंच सकी हैं तो मात्र ५ प्रतिशत योजना राशि को देसी चिकित्सा सेवाओं के नाम पर खर्च करके हम क्या सिद्ध करना चाहते हैं? क्या हम यह बताना चाहते हैं कि जो स्वास्थ्य परम्पराएं किसी भी सरकार की सहायता के बिना ही युगों से जीवित चली आ रही हैं उन्हें अब सरकारी सहायता की आवश्यकता क्यों है? हम यह भूल रहे हैं कि आज के समाज में जब प्राकृतिक संसाधनों पर भी सरकार का नियंत्रण है तो उसका यह दायित्व हो जाता है कि उन संसाधनों पर टिके सभी तंत्रों को मजबूत करने के लिए वह उचित कदम उठाये। हमें आशा है कि अगली पंचवर्षीय योजना में हमारे निर्णेता लोक स्वास्थ्य की देसी परम्पराओं को मजबूत करने के लिए महज शब्द नहीं वरन कुछ ठोस कदम उठाने लायक संसाधन जुटाने का प्रयास भी करेंगे अन्यथा हम यह भली भांति जानते हैं कि 'जीवनीय' जैसे लोक स्वास्थ्य परम्परा संवर्धन समिति के प्रयास ऊंट के मुंह में जीरे से अधिक सिद्ध नहीं होंगे।

पाठकों से .....

प्रिय डा. मिश्र,

आपके द्वारा भेजी हुई जीवनीय द्विमासिक अंक १ ; १९८९ ई. की प्रति सहर्ष प्राप्त हुई। इसका मैंने आद्योपान्त अध्ययन किया। उक्त पत्रिका जनसाधारण तथा आयुर्वेदीय अध्यापकों के लिए बहुत ही उपयोगी है। उक्त पत्रिका में द्रव्यगुण, कायचिकित्सा, स्वस्थ्यवृत्त एवं विकारों सम्बन्धी बहुत सी उपयोगी सामग्री पढ़ने को मिली। सभी सामग्री बहुत अच्छे ढंग से सरल भाषा में प्रस्तुत की गयी है। इन सबके लिए सम्पादक मण्डल बधाई का पात्र है।

मुझे आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि यह अपने नये अगले अंक में और प्रगति करेगा। पुनः पूरा सम्पादक मण्डल बधाई का पात्र है।

भवदीय

प्रो. रमेश चन्द्र, प्रधानाचार्य/अधीक्षक

राजकीय आयुर्वेदिक महाविद्यालय, लखनऊ

श्रीमान जी,

जीवनीय पत्रिका का अंक मिला। मेरा ख्याल है, यह पहला ही अंक है। सामग्री बहुत उपयोगी जान पड़ी। परिवार के सभी सदस्यों ने लोकतांत्रिक ढंग से निर्णय लिया है कि उस पत्रिका को मंगाया जायेगा। आर्डर एक आध हफ्ते में पहुंचने ही वाला है।

चारुचंद्र त्रिपाठी, कानपुर देहात

सम्पादक महोदय,

आपके द्वारा प्रस्तुत जीवनीय अंक हर दृष्टि से मानव उपयोगी लगा। जीव नीय के द्वारा प्रस्तुत स्वास्थ्य लेख अच्छे व उपयोगी हैं, साथ ही इतनी सरल भाषा में है कि प्रत्येक व्यक्ति उसे आसानी से समझकर अपने उपयोग में ला सकता है आपका यह प्रयास मानव स्वास्थ्य के लिए बड़ा ही उपयोगी है। आशा है कि आप इसी तरह की अमूल्य जानकारियां पाठकों को हमेशा प्रस्तुत करते रहेंगे जिससे कि इस महंगाई में प्रत्येक व्यक्ति पढ़कर लाभ उठा सकेगा और अपने स्वास्थ्य की देखभाल कर स्वस्थ रह सकेगा।

प्रेम प्रकाश अस्थाना, सण्डीला, हरदोई

महोदय,

पत्रिका 'जीवनीय' प्रथम अंक देखा। ऐसा प्रतीत हुआ कि आयुर्वेद को जिस पत्रिका का इंतजार काफी लम्बे काल से था वह प्रकाशित होनी प्रारम्भ हुई है। इससे सामान्य जन के साथ-साथ छात्रों एवं शोध कर्ताओं को भी लाभ होगा यह मेरा विश्वास है। इसमें आयुर्वेद में हो रही नवीनतम शोधों के सम्बन्ध में परिचयात्मक तथ्य भी प्रकाशित करने से इसकी उपयोगिता और बढ़ सकती है।

प्रो. यज्ञदत्त शुक्ल, लखनऊ

इस अंक में

वर्षा ऋतु ——— ३

त्रिदोषनाशक- हरड़ या हरीतकी ——— ५

जीवनीय वनस्पतियाँ ——— ८

अपना हकीम- नीम ——— ९

बस्ति चिकित्सा ——— ११

कटहल-सब्जी और फल ——— १३

कालमेघ ——— १४

कुलथी ——— १५

भूम्यामलकी ——— १६

एक यूनानी दवा-लहसुन ——— १७

सर्वप्रिय जामुन ——— १८

आम ——— १९

घुइयां ——— २१

पाचन चूर्ण ——— २२

आंखें अच्छी कैसे बने रहें ——— २३

स्वादिष्ट करौंदा ——— २५

कामला (पीलिया) ——— २७

दद्रु अर्थात् दाद ——— २९

गर्भावस्था- आहार विहार ——— ३०

एक प्रति का मूल्य ५ रु. मात्र

वर्षा ऋतु में कैसे स्वस्थ रहें

आयुर्वेद केवल औषधि का ही शास्त्र नहीं है अपितु यह जीवन का शास्त्र है, इसीलिए व्यक्ति को रोग से पीड़ित न होने के लिए क्या-क्या करना चाहिए इसका उपदेश शास्त्र में किया गया है। कौन सी ऋतु में क्या खाना चाहिए, क्या पीना चाहिए, क्या नहीं करना चाहिए, क्या करने से कौन से रोग उत्पन्न हो सकते हैं- उनका निवारण करने के उपाय, यह सब उस ऋतु के जलवायु-अन्न-औषध के स्वभाव को ध्यान में रख कर किया गया है। यहां वर्षा ऋतु के बारे में संक्षेप में विचार करेंगे।

वर्षा ऋतु ग्रीष्म के बाद आती है। ग्रीष्म में सूर्य के प्रचंड ताप से प्राणियों के शरीर में पोषक एवं स्निग्ध तत्वों की कमी से होने वाली दुर्बलता से इस ऋतु में राहत मिलती है। साधारणतया जुलाई एवं अगस्त वर्षा ऋतु के मास हैं। परन्तु भारत विविध ऋतुओं का देश है, जहां कहीं-कहीं वर्षा चार माह तक होती है।

आयुर्वेद में 'प्रावृट्' नामक ऋतु का भी वर्णन है। 'वर्षा के पूर्व' का काल प्रावृट् कहलाता है। हालांकि यह ऋतु दक्षिणायन और विसर्गकाल में शामिल की गयी है किन्तु कोई यह न समझ बैठे कि इस ऋतु में शरीर का बल बहुत बढ़ने वाला है अतः अब कोई भय नहीं है। असल में यह ऋतु आदान काल और विसर्ग काल के संधिकाल में है- अतः शरीर की शक्ति का कम होना अभी पूरी तरह खत्म नहीं होता है। अतः संधिकाल में पीछे की ऋतु-ग्रीष्म का आचरण धीरे-धीरे ही छोड़ना चाहिए और धीरे-धीरे वर्षा का आचरण प्रारम्भ करना चाहिए।

स्वास्थ्य पर प्रभाव

इस ऋतु में अधिक वर्षा के कारण चारों ओर जल भरा रहता है। कीचड़ और गंदगी के कारण मच्छर और मक्खियां अधिक होती हैं। इससे बीमारियों के फैलने का डर रहता है। वातावरण में नमी की अधिकता के कारण शरीर का पसीना नहीं सूखता, जिसके कारण अनेक चर्मरोग पैदा हो जाते हैं। बरसात में पेट की अनेक बीमारियां, जैसे अफारा, गैस की शिकायत, पेटदर्द, दस्त अथवा कब्ज, सर्दी, जुकाम, बुखार, हाथ पैरों में दर्द, जी मिचलाना, उल्टी आदि हो सकती हैं। स्वास्थ्य की दृष्टि से वर्षा उत्तम नहीं है। प्राकृतिक परिवर्तनों की अधिकता से इस ऋतु में वात का प्रकोप एवं पित्त का संचय होता है अतः इस ऋतु में वात एवं पित्त संबंधी विविध रोगों के होने की आशंका रहती है।

वर्षा में वातप्रकोप

वर्षा ऋतु वात दोष का प्रकोप काल है। (यहां वायु यानी गैस से ऐसा अर्थ न लें वरन् रूक्ष, लघु, चल आदि स्वभाव से युक्त सभी चेष्टादि कर्म करने वाला दोष वात है।) ग्रीष्म ऋतु में (मई, जून) शरीर का वात बढ़ जाता है। गर्मी की अधिकता से वायु रूक्ष होती है। वात के बढ़ने से वात रोग उत्पन्न हो सकती है जिनमें जोड़ों में दर्द और सूजन, लकवा, अर्दित पंगु (पोलियो), पीठ एवं कमर में दर्द या हाथ पैर अथवा पूरे शरीर में दर्द आदि प्रधान हैं।

सावधानियां

इस ऋतु में पानी को उबाल कर ठंडा करके पीने का नियम रखने से पेट की अनेक बीमारियों से बचा जा सकता है। घर के आस-पास की गंदगी को साफ रखें और यथासम्भव घर के दरवाजे और खिड़कियां दिन में खुली रखें जिससे सूर्य की किरणें घर में प्रवेश कर सकें।

व्यक्तिगत स्वास्थ्य के प्रति सतर्कता

यह ऋतु व्यायाम के लिये अत्यन्त उपयुक्त है। इस ऋतु में नियमित मालिश, स्नान एवं व्यायाम अत्यंत लाभकारी है। घर से बाहर निकलते समय छाता या बरसाती साथ होना चाहिए। वर्षा होने पर भीगने से यथासम्भव बचें। भीगने पर गीले वस्त्रों को यथाशीघ्र त्याग कर सूखे कपड़े पहन लेना चाहिए। घर से बाहर निकलते समय जूते पहन लेना चाहिए। यथासम्भव कपड़े सूती, सफेद या हल्के रंगीन, पहनने चाहिए।

खानपान

वर्षा ऋतु में हल्का, सुपाच्य एवं अग्निवर्धक भोजन लेना चाहिए। इस मौसम में वात का प्रकोप होता है अतः वात प्रकोपक, शीतल एवं रूखे-सूखे अन्न का सेवन नहीं करना चाहिए। पित्त का संचय होने की इस ऋतु में तीक्ष्ण अम्ल एवं अत्यधिक मसालेयुक्त भोजन नहीं करना चाहिए। जिस भोजन में गंध आती हो, जो एक दिन पहले का बना या मक्खियों से दूषित हो गया हो, उसका सेवन नहीं करना चाहिए तथा सुगन्धित अल्प प्रमाण में ताजा भोजन किया जाय। शहद का सेवन विभिन्न पदार्थों के साथ करें। अग्नि की रक्षा करते हुए गेहूं, चावल, पुराना जौ, मूंग, अरहर की दाल, हरी सब्जियां, जांगल पशु-पक्षियों के मांस एवं मांस रस का सेवन करें। पत्ते वाली सब्जी, गरिष्ठ

भोजन, खट्टा दही, बासी भोजन, अत्यधिक शीतल जल तथा बाजार के कटे फलों का सेवन न करें। भोजन के उपरांत नमक, जीरा एवं मेथी का छौंक किया मट्ठे का सेवन उत्तम माना गया है। बेल, नीबू, सेव, और अनार का शर्बत अग्नि को बढ़ानेवाला होता है। बर्फ का सेवन किसी भी स्थिति में नहीं करना चाहिए।

प्रातः नाश्ते में नमकीन अथवा मीठा सत्तू, दलिया, सेंकी हुई एवं मक्खन लगी डबलरोटी, चाय या दूध का सेवन कर सकते हैं।

दोपहर के खाने में गेहूं की रोटी, मूंग या अरहर की दाल, पुराना चावल, मांसरस, मछली तथा हरी सब्जियां लेना चाहिए। भोजन के उपरांत लवण भास्कर चूर्ण एक चम्मच अथवा मेथी जीरा से छौंक कर नमक मिलाकर एक गिलास ताजा मट्ठा लेना चाहिए।

तीसरे पहर का नाश्ता

सेव, अनार, चीकू, केला, मूंग की दाल एवं बेसन के सेव, पापड़ी, गांठिया अ दि नमकीन तीसरे पहर चाय के साथ लिये जा सकते हैं।

रात्रि में गेहूं की रोटी, हरी सब्जी, प्याज, धनिया, नारियल की चटनी, पापड़ तथा मट्ठे का इस्तेमाल किया जा सकता है। आइसक्रीम, मलाई, कुल्फी तथा अन्य ठंडे पेय द्रव्य वर्षा ऋतु में हानिकारक होने से न लेवें। अदरक एवं नीबू का प्रयोग इस ऋतु में लाभदायक है। बीड़ी, सिगरेट एवं तम्बाकू का प्रयोग कम करें।

(वैद्य पूर्णचन्द्र जैन एवं हरिदास श्रीधर कस्तूरे के लेखों पर आधारित)

वर्षा ऋतु का खान-पान और रहन-सहन

- ठण्डे पेय जैसे ठंडा दूध, लस्सी, कोकाकोला, लिमका आदि तथा ठंडा पानी नहीं पीना चाहिए।
- **बर्फीली हवा, जहां ओंस पड़ी हो या ठंडी हवा चल रही हो वहां न घूमें।**
- दिन के समय सोना नहीं चाहिए।
- बहुत अधिक शारीरिक व्यायाम, तथा स्त्री संग नहीं करना चाहिए।
- आहार की वस्तुओं में तथा पेय पदार्थों में मद्य, अथवा आसव, अरिष्ट शहद के साथ सेवन कर सकते हैं।
- लवण युक्त पदार्थों का उपयोग आहार में करें। खट्टे पदार्थ- नींबू, अचार, तक्र, इमली आदि उपयोग न करें।
- मांस रस, बार्ली (जौ) का पानी, गेहूं, चावल, घी, और दूध का उपयोग करें।
- नदी, तालाब, अथवा वर्षा का जल इस ऋतु में नहीं पीना चाहिए। यदि पीना पड़े तो उबालकर ठंडा करके ही पीना चाहिए।
- नियमित तेल मालिश करनी चाहिए। मालिश के लिए तिल तेल अच्छा है। उत्तर प्रदेश में सरसों के तेल का प्रयोग करते हैं- सर्दी में वह लाभकारक है। अथवा नारायण तेल, क्षीरबला तैल या दशमूल तेल का उपयोग करना चाहिए।
- मालिश (अभ्यंग) के बाद तेल मर्दन (शरीर को दबाना)-यह क्रिया लाभकारक होती है।
- उसके बाद स्नान करें। नियमित स्नान स्वास्थ्य वर्धक होता है। स्नान के समय बेसन से उबटन करना चाहिए। स्नान के लिए गुनगुने गरम पानी का उपयोग करें। गरम पानी के टब में १५-२० मिनट तक लेटे रहकर अवगाह स्वेद करना चाहिए। इससे वायु से बढ़ने वाले दर्द (अंगग्रह) जैसे विकार दूर हो जाते हैं।
- हल्के और स्वच्छ कपड़े पहनना चाहिए।
- ऐसी जगह रहना चाहिए जहां नमी न हो और वातावरण में गरम भाप न हो।
- वात प्रकोप से हाजमा ठीक नहीं रहता अतः पाचन योग जैसे- हींग, जीरा, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, अदरक, लहसुन का उपयोग भोजन में अधिक करना चाहिए।
- वर्षा ऋतु में अधिक पैदल नहीं चलना चाहिए जहां तक सम्भव हो वाहन का ही उपयोग करें। जो लोग नित्य नियम से घूमने जाते हैं उन्हें नियम चालू रखना चाहिए।
- यदि कपड़े ठीक से न सूखे हो तों उन्हें आंच पर सुखाकर या धूप देकर ही पहनें।
- सुगन्धित पदार्थों का उपयोग करें।
- घर की छत पर कुछ समय तक बैठ सकते हैं।
- आहार में मधुर-स्निग्ध वस्तुएं जैसे दूध, घी, शक्कर. मक्खन, मधुर, फल, तेल, मांस रसों का उपयोग करें।
- शरीर में दोषों की शुद्धि के लिए रोज रात में भुनी हुई हरड़ का चूर्ण, स्वादिष्ट विरेचन चूर्ण (इसमें से कोई एक) २-३ ग्राम की मात्रा में गरम पानी के साथ लेने से पेट साफ हो जाता है। दिन में २ या ३ बार गरम पानी पीना पाचन में लाभकारी होगा। आहार नीचे दी गयी तालिका के अनुसार लेना चाहिए (पेज १० देखें)

-वैद्य हरीदास श्रीधर कस्तूरे, गांधीनगर

त्रिदोषनाशक- हरड़ या हरीतकी

पं. माधवाचार्य
लखनऊ

हरीतकी मंझोले आकार के वृक्ष का फल है जो भारत, पाकिस्तान और बर्मा में बहुतायत से होता है। प्रसिद्ध आयुर्वेदीय औषधि त्रिफला का यह एक घटक है।

द्रव्यगुण के आचार्यों ने हरीतकी को मां के समान हितकारी बतलाया है। यहां तक कहा गया है कि मां भी एकाध बार नाराज हो सकती है किन्तु पेट में पहुंची हुई हरीतकी कभी हित के सिवाय अहित नहीं कर सकती। भारत में प्रचलित हरीतकी के कुछ नाम निम्नलिखित हैं-

संस्कृत- हरीतकी, शिवा, पथ्या, अभया, अव्यथा; हिन्दी- हरड़, हर्रा, हर्र, हर्रे; मराठी- हरडे; गुजराती- हिरड़ो; पंजाबी- हर; असमिया- हिलिखा; तेलुगु- करक्काय; तमिल- कड़क्कायि; कन्नड़- अणिलेकायि; मलयालम- कडुक्का, कटुक्का; बंगला- हर्तकी; अंग्रेजी- चेब्यूलिक मायरोबैलन, इंकनट; लैटिन- टर्मिनेलिया चेबुला।

शास्त्रों में सात प्रकार की हरीतकी का वर्णन पाया जाता है किन्तु आजकल बाजार में निम्न तीन प्रकार की हरीतकी पायी जाती है:-

१-छोटी हरड़

जो हरड़ गुठली पड़ने से पहले ही पेड़ से टूट कर गिर जाते हैं या तोड़कर सुखा लिये जाते हैं उन्हें छोटी हरड़ कहते हैं। भारत में प्रचलित इसके कुछ नाम इस प्रकार हैं-

हिन्दी- जौ हड़, जवा हड़, काली हड़, बालहड़; उर्दू- जंगी हड़; गुजराती- हीमज; सिन्धी- इंजड़ी।

छोटी हरड़ अण्डाकार, दोनों सिरों पर नोकदार १ सेमी से २ सेमी तक लम्बी, १ से.मी. चौड़ी, लम्बाई में झुर्रीदार, ठोस, सरलता से फूटने वाली और रंग में काली होती है। इसका स्वाद अत्यन्त कसैला होता है। काली, कड़ी, भारी और विकार रहित हरड़ औषध के लिए उत्तम मानी जाती है। यह रेचन (जुलाब) के लिए उपयुक्त है।

२-पीली हरड़

यह गुठलीदार हरड़ का पूरा फल है। बड़ी, पीली, छोटी गुठली की ताजा हरड़ उत्तम होती है। इसके कुछ प्रसिद्ध नाम निम्नलिखित हैं-

हिन्दी- छीयाहड़, पीलीहड़, बड़ी हड़; उर्दू-जर्द हड़; मराठी, गुजराती-हरड़ा।

३-काबुली हड़

जब हरड़ बढ़कर असाधारण रूप से परिपुष्ट एवं मोटी हो जाती है तो उसे काबुली हड़ कहते हैं। प्राचीन काल में भारत से भूमार्ग से काबुल होते हुए तूरान, खुरासान, ईरान आदि देशों को इसका निर्यात होता था और तभी से इसे काबुली हरड़ कहा जा रहा है। ताजा, बड़ी, पानी में डूबने वाली, लाली लिए पीली, गूदेदार, कम रेशों वाली और छोटी गुठली वाली हरड़ उत्तम होती है। इसके निम्न नाम प्रसिद्ध हैं-

हिन्दी- काबुली हरड़, अम्बिया हरड़, बड़ी हर्रे, अमृतसरी हरड़; मराठी- सुखारी हरड़े; गुजराती- म्योटी हरड़े; बंगला- हरितकी।

उत्पत्ति-स्थान के अनुसार नम भू-भाग में उत्पन्न हरड़ की अपेक्षा जंगल में उत्पन्न और उसकी अपेक्षा पहाड़ों पर उत्पन्न हरड़ श्रेष्ठ मानी जाती है।

हरड़ में लवण को छोड़कर शेष पांचों रस पाये जाते हैं। विशेष रूप से इसमें कषाय रस पाया जाता है। इसकी तासीर गरम है। यह बल और बुद्धि की वृद्धि करती है, आंखों के लिए लाभकारी है तथा हल्की है और भूख बढ़ाती है। प्रायः सभी रोगों में अन्य औषधियों के साथ इसका व्यवहार किया जा सकता है। पाचन संबंधी रोगों में यह विशेष रूप से अचूक है।

औषधीय प्रयोग

कब्ज

हरड़ कब्ज की अचूक दवा है। कब्ज से पीड़ित व्यक्ति को भोजन के आधे घण्टे बाद डेढ़ ग्राम हरड़ चूर्ण खाकर गुनगुना पानी पीना चाहिए।

बवासीर

बादी वाले बवासीर में हरड़ का सेवन निम्न प्रकार से करना चाहिए-

हरड़ चूर्ण	३-४ ग्रा.
नीम की मींगी का चूर्ण	३-४ ग्रा.
	एक मात्रा

उपर्युक्त औषधि सुबह, दोपहर, शाम दूध के साथ लगातार बीस दिनों तक सेवन करें। कब्ज दूर हो जाने पर हरड़ का सेवन सिर्फ एक बार रात्रि में भोजन के बाद ही करना चाहिए।

पेट की बीमारियों में

हरड़ चूर्ण	२ ग्राम
तुलसी के पत्ते	१ ग्राम
सेंधा नमक	१२५ मि.ग्रा.
अजवायन	२५० मि.ग्रा.

अपचन, पेट में दर्द, अफारा, गैस आदि पेट की बीमारियों में उपयुक्त मात्रा में भोजन के बाद पानी के साथ औषध सेवन करने पर सारी शिकायतें दूर होकर रोगी अपने शरीर में हल्कापन अनुभव करता है। रोगी धैर्य के साथ कई दिनों तक पथ्य के साथ औषधि सेवन करे, (चिकना, तला हुआ मसालेदार भोजन न करे वरन आसानी से पचने वाला भोजन- जैसे मूंग की दाल की खिचड़ी, परवल, चावल का मांड, आदि का सेवन करें।)

बच्चों के कफ के रोगों में

सर्दी के मौसम में बच्चे प्रायः खांसी एवं जुकाम से पीड़ित होते हैं। बच्चे प्रायः बलगम को खखार कर थूकने में असमर्थ रहते हैं और कष्ट पाते हैं। ऐसी स्थिति में बच्चों को दिन में तीन बार हरड़ और हल्दी को पानी में घिसकर थोड़ी शक्कर मिला कर गरम करके चटाना चाहिए। इससे मलमार्ग से बलगम निकल जाता है और बच्चा स्वस्थ हो जाता है।

वायुगोला (गुल्म में)

पेट में कड़ा सा वायु का गोला हो जाने पर भोजन की इच्छा नहीं होती है तथा मल, मूत्र एवं वायु भी आसानी से बाहर नहीं निकल पाती है। आंतों में गुड़गुड़ाहट होती है और डकारें भी अधिक आती हैं। इस रोग में हरड़ अत्यंत प्रभावशाली सिद्ध हुई है। प्रयोगविधि निम्नलिखित है-

हरड़ चूर्ण	७५० मिग्रा.
गुड़	७५० मिग्रा.
तुलसी-पत्र	१२५ मिग्रा.
	एक मात्रा

सुबह शाम दोनों समय उपर्युक्त औषधि दूध के साथ लेने से थोड़े ही दिनों में वायुगोला मिट जाता है।

चर्म रोगों में

चर्म रोगों में हरड़ बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुई है। शहद के साथ इसका सेवन दीर्घकाल तक करने से कई प्रकार के चर्म रोग नष्ट हो जाते हैं। रोगी को यथासम्भव नमक कम कर देना चाहिए और चटपटे पदार्थों से मुंह मोड़ लेना चाहिए। रोगी को भोजन के पन्द्रह मिनट बाद दोनों समय १-२ ग्राम की मात्रा में हरड़ चूर्ण लेना चाहिए। विशेषकर पसीना अधिक निकलने वाले स्थानों में छोटी-छोटी फुन्सियों पर हरड़ को घिस कर लेप लगाने से लाभ होता है।

अजीर्ण एवं उल्टी में

हरड़ चूर्ण	५०० मिग्रा.
सोंठ चूर्ण	२५० मिग्रा.
गुड़	५०० मिग्रा.
सेंधा नमक	५०० मिग्रा.
	एक मात्रा

सुबह-शाम यथासम्भव अधिक पानी के साथ सेवन करने से लाभ होता है।

हरड़ वर्जित

निम्नलिखित स्थितियों में हरड़ का सेवन नहीं करना चाहिए-

- गर्मी एवं प्यास से पीड़ित होने पर।
- रुखा-सूखा भोजन करने वालों को हरड़ नहीं लेना चाहिए अन्यथा लाभ के स्थान पर हानि हो सकती है।
- यात्रा से थके हुए व्यक्ति हरड़ का सेवन न करें।
- उपवास करने के कारण कमजोर व्यक्तियों को हरड़ लेना वर्जित है।
- गर्भवती स्त्रियों के लिए हरड़ वर्जित है।
- रक्तस्राव में हरड़ निषिद्ध है।

- पित्त बढ़ जाने पर हरड़ न लें (पित्त प्रकृति वाले हरड़ का सेवन नहीं करें।

- नवज्वर (नया बुखार-जिसे आते एक सप्ताह से कम हुआ हो) में हरड़ का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

विशेष

शरीर के बल को बढ़ाने के लिए शास्त्रज्ञों ने हरड़ का सेवन रसायन की तरह अलग-अलग ऋतुओं में विभिन्न अनुपातों के साथ करने का सुझाव दिया है। इसके अनुसार वर्षा ऋतु में सेंधा नमक के साथ, शरद में शक्कर के साथ, हेमंत में सोंठ के साथ, शिशिर में पिप्पली के साथ, बसंत में शहद के साथ तथा गर्मी में समान मात्रा के गुड़ के साथ १-२ ग्राम हरड़ का सेवन कर सकते हैं। ●

भारतवर्ष में पहली बार चिकित्सकों और औषधियों के बिना स्वास्थ्य सेवाओं पर प्रशिक्षण कार्यक्रम

दिनांक

अगस्त ११-१८, १९८९
नवम्बर २-८, १९८९

स्थान

अध्यात्म साधना केन्द्र
नई दिल्ली- ११००३०

प्रशिक्षण के विषय :

योग, साधना, वनौषधि उद्यान और सूर्य विकिरण से उपचार

कार्यक्रम की फीस :

भोजन एवं रहने सहित- रु. ३००/-
(विद्यार्थियों एवं बेरोजगारों के लिए - रु. २००/-)

सम्पर्क सूत्र :

ज्वाइंट एसिस्टेंस सेंटर, एच-६५,
साउथ एक्सटेंशन- १, नयी दिल्ली- ११००४९

अपना हकीम- नीम

नीम के पेड़ को सभी लोग पहचानते हैं क्योंकि आज भी शहरों व गॉवों के अनेक लोग सुबह-सुबह इसकी टहनियों का दातून बनाते हैं तथा इसकी पत्तियों का प्रयोग अन्न और कपड़ों को कीड़ों से बचाने के लिए करते हैं।

इसका पेड़ १० से १५ मी. ऊँचा, अनेक शाखाओं सहित घना और छायादार होता है। छोटी-छोटी टहनियों के अंत में ५-१० सेमी. लम्बे, ५ से ९ के जोड़ों में पत्ते होते हैं। वसंत ऋतु में पुराने पत्ते गिर जाते हैं और नए पत्तों के निकलने के साथ ही छोटे-छोटे सफेद रंग के सुगंधयुक्त फूलों के गुच्छे लगते हैं। इसके फल छोटे गुच्छों में करीब १ सेमी. व्यास के गोल होते हैं। ये कच्ची अवस्था में हरे तथा पकने पर पीले होते हैं। प्रत्येक फल में एक बीज होता है। इनको निबोली भी कहते हैं।

इसकी छाल करीब १० मि.मी. मोटी, बाहर से भूरे रंग की, खुरदरी फटी-फटी, अन्दर से पीली एवं परतदार होती है।

विभिन्न भाषाओं में नीम के नाम:-

हिन्दी नाम- नीम, बंगाली- निम, मराठी- कडूनिंब, गुजराती- लीमड़ो, लींबड़ो, पंजाबी- निंब, तमिल- वेम्बु, तेलुगु- वेय, मलयालम- वेप्पु, अंग्रेजी- नीम ट्री, ले. नाम- एझडिरेक्टा इण्डिका।

औषधीय गुण व उपयोग

नीम के पत्ते, छाल, फूल व निंबोली (फल)- इन सभी में औषधीय गुण होते हैं।

नीम के पत्ते

आधुनिक विशेषज्ञों के अनुसार नीम के पत्तों में जीवाणुनाशक गुण अधिक होता है। इसके पत्तों के स्पर्श से ही जीवाणु नष्ट हो जाते हैं।

खाज, खुजली, फोड़े व फुन्सियां होने पर नीम की हरी पत्तियों को पानी में उबालकर स्नान करने या उस स्थान को धोने से लाभ मिलता है इसके पत्तों को पीसकर भी लगाते हैं।

नीम के फल (निंबोली) सबसे अधिक गुणकारी होते हैं। ग्रीष्म ऋतु के अंत (या वर्षा के शुरू) में इसके पक जाने पर निंबोली का रंग पीला हो जाता है। इस अवस्था में इसको खाया जाता है। ये खाने में स्वादिष्ट (मीठी/कड़वी) होती हैं। इनका प्रयोग करने पर त्वचा के रोग खाज-खुजली दूर होते हैं। इसके सेवन से मुहांसे भी ठीक हो जाते हैं।

निंबोली का तेल भी निकाला जाता है। इसे दांतों में लगाने से कीड़े मर जाते हैं और दांत के रोग (जैसे पायरिया) में निंबोली के तेल की कुछ बूंदे, सादे पानी में डालकर, दांतों को धोने से फायदा होता है तथा बदबू भी दूर हो जाती है। पुराना घाव जो ठीक न हो रहा हो उसे नीम के तेल से धोकर एक या दो बूंद डालकर पट्टी बांधने पर घाव जल्दी भर जाता है।

कान के दर्द में नीम के पत्तों के साथ उबाले पानी से धोने के बाद नीम का तेल डालने से लाभ होता है। गर्मी में लोगों को शरीर पर धमौरिया निकल आती हैं इस अवस्था में लोग तरह-तरह के साबुन व अन्य प्रसाधन प्रयोग करते हैं उनके स्थान पर नीम के तेल की ६-७ बूंदे, एक बाल्टी पानी में डालकर उस पानी से नहाना चाहिए। तीन-चार दिनों में लाभ मिलता है।

मक्खियों, मच्छरों को नष्ट करने के लिए नीम अधिक उपयोगी है। नीम की सूखी पत्तियां जलाकर धुआं करने से मक्खी मच्छर नष्ट होते हैं तथा वातावरण भी शुद्ध होता है। गांवों में इस विधि का प्रयोग मच्छरों को भगाने के लिए प्रायः किया जाता है।

नीम के फूलों को साफ कपड़े में बांध लें। उसे सरसों के तेल में भिगोकर बत्ती बनाकर जलाएं। उसका धुआं एक मिट्टी के या स्टील के बर्तन पर इकट्ठा करके काजल बनाएं, यह आंखों के लिए लाभकारी है।

नीम का तेल बनाने की विधि

गर्मी के मौसम में निंबौली को एकत्र करके रख लेते हैं फिर इनको कोल्हू में पेरकर तेल निकाल लेते हैं। इस तेल को अच्छी तरह साफ शीशी या बोतल में भरकर रख लेते हैं तथा डाट से शीशी या बोतल का मुख बंद कर देते हैं। आवश्यकता पड़ने पर इनका उपयोग किया जाता है।

इन सब गुणों के होते हुए भी नीम का तेल वात प्रकृति के लोगों के लिए हानिकारक है। अतः ऐसे व्यक्तियों को इसके कुप्रभाव को कम करने के लिए इसका उपयोग शहद के साथ करना चाहिए।

(वैद्य एम.एल. कपूर, लखनऊ द्वारा प्रस्तुत लेख पर आधारित)

वर्षा ऋतु में पथ्य एवं अपथ्य आहार

वात शामक भोजन–पथ्य	वातकारक भोजन–अपथ्य
- गेहूं , चावल	- जौ
- उड़द, तिल	- मोठ
- अलसी	- मसूर
- शक्कर, गुड़	- तुवर-अरहर
- तेल, घी	- चना
- दूध, मक्खन	- मटर
- बथुवा	- कोदों (चावल)
- अनार	- ककडी
- बादाम	- कनेरसा
- खजूर	- तोरई
- मूली	- कच्चा आम
- गाजर	- कोकम
- पक्का आम	
- केला	
- सेब	
- मांस (मटन सूप) यकृत् सूप, अंडे	

जीवनीय वनस्पतियां

डा. उमेश चन्द्र शर्मा, लखनऊ

''जीवनम् आयुः तस्मै हितं जीवनीयम्''

अर्थात् जीवन या आयु के लिए जो कुछ लाभकारी है, उसे 'जीवनीय' कहते हैं। आज से २५००-३००० वर्ष पूर्व चरक व सुश्रुत ने अपने अनुसंधान द्वारा प्रकृति में उपलब्ध वनस्पतियों में से, कुछ इस प्रकार की औषधियों की खोज की, जिनका प्रयोग करने पर मानव वृद्धावस्था के समय उत्पन्न होने वाले लक्षणों पर विजय प्राप्त करके स्वस्थ शरीर व दीर्घायु को प्राप्त होता है। इसके अलावा यदि युवावस्था में भी वृद्धावस्था के कुछ लक्षण पैदा हो रहे हों जिनके कारण व्यक्ति अपने दैनिक कार्यों को करने में दुखी हो तथा उसे हमेशा बिस्तर का सहारा लिये रहना पड़े तो इन 'जीवनीय' औषधियों का प्रयोग कर सफलता प्राप्त की जा सकती है।

आयुर्वेद में चिकित्सा के दो मूल उद्देश्य बताये गये हैं:-

१. स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य को बचाये रखना।

२. रोगों को दूर करना।

चरक ने 'स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा करना', चिकित्सा का पहला उद्देश्य माना व इसी हेतु १० वानस्पतिक औषधियों की खोजकर उनका एक अलग 'जीवनीय' वर्ग बनाया। ये औषधियाँ हैं- (१) जीवक (२) ऋषभक (३) मेदा (४) महामेदा (५) काकोली (६) क्षीर काकोली (७) मुद्गपर्णी (८) माषपर्णी (९) जीवन्ती (१०) यष्टीमधु (मुलेठी)।

इनमें से पहली आठ 'अष्टवर्ग' के नाम से जानी जाती हैं। चरक ने 'अष्टवर्ग' के साथ अन्य वनस्पतियां मिलाकर 'च्यवनप्राश' नामक औषधि का निर्माण किया जिसका प्रयोग कर वृद्ध 'च्यवन ऋषि' ने पुनः युवा शरीर प्राप्त किया। 'अष्टवर्ग' से बनी हुई औषधि 'च्यवनप्राश' इतनी लोकप्रिय हुई कि तब से लेकर आज तक इसका प्रयोग स्वास्थ्यवर्धन के लिए हो रहा है।

सुश्रुत ने कुछ और जीवनीय औषधियां खोजी जिनमें निम्न प्रमुख हैं:-

(१) गिलोय (गुडुच) (२) वंशलोचन (३) कर्कटश्रृंगी

कुछ चिकित्सकों ने गाय के दूध को सर्वश्रेष्ठ 'जीवनीय' बताया है।

हिमालय के ऊंचे पर्वतों पर कम मात्रा में ही पायी जाने वाली ये जीवनीय औषधियां सर्वसुलभ न होने के कारण धीरे-धीरे लुप्त हो गयीं। अतः मध्ययुग में आचार्य 'भावमिश्र' ने कुछ ऐसी वनस्पतियां खोजीं जो चरक व सुश्रुत द्वारा खोजी गयी औषधियों के समान लाभकारी थीं। भावमिश्र द्वारा खोजी गई जीवनीय औषधियां आज भी उपलब्ध हैं। इन्होंने अष्टवर्ग वाली औषधियों के स्थान पर जिनका प्रयोग किया वे निम्न हैं:-

दुर्लभ औषधियाँ		प्रतिनिधि औषधियाँ
जीवक	के स्थान पर	गिलोय
ऋषभक	,,	वंश लोचन
मेदा	,,	सालमिश्री
महामेदा	,,	प्रसारिणी
काकोली	,,	काली मुसली
क्षीर काकोली	,,	सफेद मुसली
ऋद्धि	,,	बला
वृद्धि	,,	महाबला

इन जीवनीय द्रव्यों का प्रयोग करने पर मनुष्य के शरीर में रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है जो शरीर को विभिन्न रोगों के आक्रमण से बचाती है तथा शरीर को स्वस्थ रखती है।

आज के युग में पुनः इन औषधियों के बारे में जानकारी प्राप्त करना आवश्यक हो गया है क्योंकि हमारा आहार इतना दूषित हो गया है कि आज का युवा भी अनेक बीमारियों से दुःखी रहता है। आज की इस स्थिति को देखते हुए 'विश्व स्वास्थ्य संगठन' ने भी चिकित्सा का उद्देश्य 'स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य को बचाये रखना' माना है, जिसके आधार पर वह विभिन्न प्रकार की योजनाएं चला रहा है, जैसे- टीके लगाकर बच्चों में रोग प्रतिरोधक क्षमता उत्पन्न करना तथा उनको स्वस्थ रखना।

वर्तमान में उपलब्ध जीवनीय औषधियाँ-

गिलोय	टीनोस्पोरा कार्डिफोलिया
वंश लोचन	बैंबुसा अरुण्डिनेसिया
प्रसारिणी	पैडेरिया फिटीडा
काली मुसली	कर्क्युलिगो आर्किओइडिस
श्वेत मुसली	एस्पेरेगस एडस्केन्डेस
बला	सीडा कॉर्डिफोलिआ
महाबला	सीडा राम्बिफोलिआ
जीवन्ती	डेन्ड्रोबिअस मेक्रीइ
यष्टिमधु	ग्लिसराइआ ग्लैब्रा
मुद्गपर्णी	फेसिओलस ट्राइलोनस
माषपर्णी	टेरम्नस लेबिस्लिस
कर्कटश्रृंगी	पिस्टसिया इंटिजिरिमा

विशेष:-

उपर्युक्त 'जीवनीय' वानस्पतिक औषधियों का विस्तृत विवरण जीवनीय के अगले अंकों में 'जीवनीय-औषधि' के अंतर्गत एक-एक करके देंगे।

बस्ति चिकित्सा

वैद्य राजकिशोर मिश्र, लखनऊ

गुद मार्ग (मल के रास्ते) या मूत्र मार्ग अथवा योनि मार्ग से शरीर में औषधि देने की विधि को बस्ति कहा जाता है। सामान्य बोल चाल की भाषा में इसका एक स्वरूप एनीमा नाम से प्रचलित है। एनीमा का प्रयोग अधिकतर कब्ज में ही लोग करते हैं। लेकिन बस्ति चिकित्सा आयुर्वेद की एक विशेष प्रकार की चिकित्सा पद्धति है। इसके प्रयोग से मलवह स्रोत (मल निकलने का रास्ता), मूत्र वह स्रोत (मूत्र नली) अथवा गर्भाशय में होने वाली बीमारियां दूर होने के साथ ही शरीर के अन्य अवयवों के रोगों की भी यह अचूक चिकित्सा विधि है। मल शोधन या टट्टी साफ करना तो एक सामान्य कार्य है। आयुर्वेद के ग्रंथों में यहां तक विशेषता बतायी गयी है कि यदि बस्ति का उचित प्रयोग रोगी की शारीरिक एवं मानसिक स्थिति और रोग के दोष-दूष्य की अवस्था को ध्यान में रखकर किया जाय तो शरीर में उत्पन्न होने वाली समस्त व्याधियां दूर हो जाती हैं। अतः इसके प्रयोग की विधि और इसमें प्रयुक्त होने वाले द्रव्यों आदि के विषय में एक सामान्य जानकारी प्रत्येक व्यक्ति के लिए आवश्यक है।

बस्ति चिकित्सा विधि

बस्ति यंत्र द्वारा जो औषधि मल मार्ग से प्रयुक्त की जाती है उसे सामान्य बस्ति और जब इसमें सामान्य द्रव्य मिलाकर प्रयोग करते हैं तथा द्रव्यों के निकलने का समय कम होता है उसे निरूह या आस्थापन बस्ति कहते हैं। और जब औषधियुक्त या तैल प्रयोग करते हैं और उन द्रव्यों के शरीर में रुकने का समय अधिक या रात्रि भर होता है उसे स्निग्ध या अनुवासन बस्ति कहते हैं। मूत्रमार्ग या योनि मार्ग से बस्ति यंत्र द्वारा जो औषधि प्रयोग की जाती है उसे उत्तर बस्ति कहते हैं। इसके अतिरिक्त विशेष प्रकार के द्रव्यों का प्रयोग जब बस्ति के द्वारा किया जाता है तो उन द्रव्यों के नाम पर बस्ति के नाम रखे गये हैं जैसे-दुग्ध का प्रयोग करने पर दुग्ध बस्ति, तक्र का प्रयोग करने पर तक्र बस्ति, पेट से कीड़े निकालने के लिए विडंग बस्ति। इसी प्रकार जिन द्रव्यों में झाग होता है उनका प्रयोग करने पर पिच्छा बस्ति तथा सदैव किसी भी समय करने वाली बस्तियों को युक्त बस्ति आदि नाम से जाना जाता है।

निरूह बस्ति

इस बस्ति में दशमूल द्रव्यों का क्वाथ या काढ़ा या रास्नादि क्वाथ या काढ़ा ५०० मि.ली. लेकर उसमें १० ग्राम शहद, १० ग्राम नमक एवं १० मि.ली. कोई तैल या घृत मिलाकर मथानी से मथ औषधि तैयार करें। इसके बाद बस्ति यंत्र द्वारा एनीमा कैन जो भली प्रकार से साफ कर स्वच्छ किया हो, उसमें हल्का गुनगुना उपरोक्त औषधि को भर दें। जिस व्यक्ति को बस्ति देनी है उसे भली प्रकार मल मूत्र त्याग कराकर प्रातःकाल ७ बजे से ९ बजे के बीच में बायीं करवट लिटा कर दाहिने पैर को मोड़ कर नाभि प्रदेश में चिपका दें। इसके बाद यंत्र के मल मार्ग में प्रविष्ट करने वाले भाग पर ग्लिसरीन लगाकर गुदा में प्रवेश करें। यदि एनीमा कैन है तो उसे लगभग १ मी. की ऊंचाई पर रख कर एनीमा लगाएं। यदि बस्ति यंत्र है तो बस्ति पुटक को इतना दबाएं कि औषधि बड़ी आंत तक चली जाये। औषधि देते समय रोगी को चाहिए कि मुंह खोलकर सांस ले।

औषधि देने के बाद रोगी को सामान्य कुर्सी पर बिठा दें। प्रायः १५ या २० मिनट के बाद मल त्याग की इच्छा होती है। किसी-किसी को ४० मिनट से एक घण्टा तक लग जाता है। जब वह मल त्याग कर ले तो भली प्रकार से हाथ मुंह धोकर या आवश्यक हो तो स्नान करके उसे कोई गरम पेय (चाय, काफी आदि) दें तथा हलका खाद्य पदार्थ जैसे चावल या मांड या अत्यन्त पतली खिचड़ी का प्रयोग करायें। यदि स्वस्थ व्यक्ति स्वास्थ्य रक्षा के लिए बस्ति ले रहा है तो उसे वर्षा ऋतु में ३ दिन तक प्रातःकाल बस्ति लेनी चाहिए और एक मास के बाद पुनः लेनी चाहिए। स्वस्थ व्यक्ति आवश्यकता पड़ने पर इसे कभी भी ले सकता है। परन्तु यदि बीमार व्यक्ति को निरूह बस्ति लेनी है तो कुशल चिकित्सक की देख-रेख में ही इसका प्रयोग करें।

दशमूल आदि के काढ़े के स्थान पर गुनगुने पानी में नींबू व नमक मिलाकर या (मट्ठे) का प्रयोग कर सकते हैं। लकवा, अर्दित, कटिवात (कमर का दर्द) आदि बीमारियों से पीड़ित रोगी सदैव चिकित्सक के संरक्षण में ही इसका प्रयोग करें। ठीक से बस्ति न करने पर हानि भी हो सकती है।

अनुवासन बस्ति

जो व्यक्ति काफी कमजोर हैं अथवा जो निरूह बस्ति का प्रयोग कर चुके हैं या जो किसी विशेष बीमारी से पीड़ित हैं और उसमें अनुवासन बस्ति का प्रयोग करना बताया गया है उन्हें हल्का एवं सुपाच्य रात

का आहार लेकर भोजन के एक घण्टे बाद सिद्ध साधित तैल या घी, जैसे क्षीर बला लाक्षादि तैल, वासा घृत या सामान्य ग्लिसरीन २० मि.ली. से ३० मि.ली. तक छोटे बस्ति यंत्र या आजकल प्रयोग होने वाली ग्लिसरीन सिरिंज में भर कर गुद मार्ग से चढ़ा दें। इसके बाद २० मिनट से ३० मिनट तक जगने दें और उसके बाद सो जाने दें। प्रातःकाल सोकर उठने पर रोगी को मल त्याग के लिए जाना चाहिए। मल के साथ प्रयोग किया हुआ द्रव्य भी बाहर निकल आता है। उसके बाद हाथ मुंह धोकर स्नान करने के बाद हल्का, आसानी से पचने वाला नाश्ता लें। प्रायः इस बस्ति में लगभग ८ घण्टे औषधि शरीर में रहती है अतः यदि १० बजे रात को बस्ति दी गयी है तो रोगी को प्रातः ६ बजे उठकर मल त्याग कर लेना है। कभी-कभी आधी रात को मल त्याग की इच्छा हो जाती है। यह इस बात का लक्षण है कि बस्ति कार्य ठीक ढंग से नहीं हुआ।

अनुवासन बस्ति का प्रयोग सामान्य अवस्था में प्रयोग करने से हानि नहीं होती है। इसे निरूह बस्ति के बाद प्रयोग करने से उत्तम लाभ मिलता है। परन्तु बीमारी में यदि इसका प्रयोग करना है तो चिकित्सक की राय लिये बिना न करें। इसी प्रकार यदि सारे शरीर का संशोधन करना है तो निरूह बस्ति और अनुवासन बस्ति के प्रयोग की विस्तृत जानकारी प्राप्त करके ही किसी चिकित्सक की देखभाल में करें।

सदैव व्यस्त रहने वाले व्यक्ति, जिनमें शक्ति की कमी रहती है मानसिक रूप से परेशान या दुखी हैं, वे दुग्ध या तक्र बस्ति का प्रयोग का प्रयोग कर सकते हैं। बवासीर रोग से पीड़ित या जिनमें मल मार्ग में विकृतियां हैं वे पिच्छा बस्ति ले सकते हैं। परन्तु पुनः हम इस बात को ध्यान रखें कि बस्ति चिकित्सा एक विशेष प्रकार की चिकित्साविधि है। अतः व्याधि की अवस्था में चिकित्सक के परामर्श के बिना इसका प्रयोग न करें। इसी प्रकार उत्तर बस्ति के लिए महिलाएं किसी महिला चिकित्सक की राय अवश्य लें। श्वेत प्रदर आदि बीमारियों में इसके प्रयोग से उत्तम लाभ मिलता है। ●

नीम-आधुनिकता के प्रकाश में

डा. एस.के. निगम एवं
डा. गोपाल मिश्र, लखनऊ

नीम के अलावा ऐसा कोई दूसरा पेड़ नहीं है जिसका महत्व पिछली कुछ दशाब्दियों में सारी दुनियां में बढ़ा हो। भारत के अन्दर और बाहर महामारी नियंत्रण से लेकर मनुष्यों के रोग तक तथा भूमि की गुणवत्ता को बढ़ाने से लेकर प्रदूषण नियंत्रण तक के इसके विविध पहलुओं पर होने वाले शोध कार्य के अतिरिक्त संयुक्त राज्य अमरीका तथा अनेक अफ्रीकी देशों में इसके बड़े-बड़े बाग लगाये गये हैं और पश्चिम जर्मनी में तो नीम का एक पूर्ण विकसित शोध संस्थान भी खुल गया है।

नीम का सम्पूर्ण वृक्ष अपने आप में एक ग्रामीण औषधालय होने की योग्यता से सम्पन्न है। आज यह इतना लोकप्रिय हो चुका है कि वह दिन दूर नहीं, जबकि नीम एक औषधालय तथा हर मर्ज की दवा के रूप में प्रतिष्ठा पायेगा।

नीम एक ऐसा असाधारण पेड़ है जिसका प्रत्येक अंग न केवल उपयोगी है बल्कि अनेक उपयोगी उत्पादनों का स्रोत भी है। औषधीय दृष्टि से इसकी छाल और पत्तियां विशेष महत्व की हैं, जिनका उल्लेख सुश्रुतसंहिता जैसे प्राचीनतम ग्रंथों में भी पाया जाता है। पत्तियां चर्मरोगों में काढ़ा, पुल्टिस, मलहम, तिला आदि बनाकर अनेक रूपों में प्रयोग की जाती हैं। यह एक आम मान्यता है कि नित्य नीम की एक ताजा पत्ती चबाने से रक्त शुद्ध रहता है। इसका मतलब यह है कि नित्य नीम की एक पत्ती खाने से मनुष्य के शरीर की प्रतिरक्षा व्यवस्था सुदृढ़ होती है।

यह बात ध्यान देने की है कि यद्यपि इसके अनेक गुण हैं किन्तु नीम के बीजों में कीड़े-मकोड़े मारने का गुण होने से आज सारा जगत इसकी ओर आकर्षित हो उठा है। साथ ही नीम से 'ऐजाडिरेक्टिन' के पृथक्करण से नीम के बीजों पर शोध का एक नया अध्याय खुल गया है।

हाल में हुए परीक्षणों से नीम के अन्य अनेक गुण प्रकाश में आये हैं, जैसे स्त्री और पुरुष गर्भनिरोधकता, फफूंदरोधकता, जीवाणुरोधकता, गठियारोधकता तथा हृदय रक्तनलिका के विकास, गैस्ट्रिक अलसर और शोथयुक्त स्टोमेटाइटिस का उपचार और दांतों की संरक्षण क्षमता।

यद्यपि यह एक अत्यंत महत्वपूर्ण पेड़ है, किन्तु अभी तक इससे सम्बन्धित जानकारियों के संकलन का उचित प्रयास नहीं किया गया है जिससे समाज का बहुत उपकार हो सकता था। अतः नीम की उपयोगिता को सिद्ध करने के लिए विस्तृत अध्ययन की आवश्यकता है।

कटहल- सब्जी और फल

यह एक स्वादिष्ट एवं सुप्रसिद्ध सब्जी तथा फल है। इसका वृक्ष भारत के सभी गरम एवं वर्षाबहुल भागों में लगाया जाता है। पूर्वी घाट एवं पश्चिमी घाट की पहाड़ियों पर इसके स्वयंजात वृक्ष बहुतायत से पाये जाते हैं और यह वहां का एक प्रधान खाद्य है। भारत में प्रचलित इसके कुछ नाम नीचे दिये जा रहे हैं-

हिन्दी-कटहल; संस्कृत- पनस, कंटकफल; बंगला- कांटोल; मराठी, गुजराती- फणस; कन्नड़- हलसु; तेलुगु- पनसमण्डु; तमिल- पेलापलम्; अंग्रेजी- इण्डियन जैक फ्रुट; लैटिन- आर्टोकार्पस हीटेरोफाइला।

कटहल का वृक्ष १० से १५ मी. तक ऊंचा होता है। इस पर नीचे से लेकर ऊपर तक वृक्ष के तने से, शाखाओं से फल निकल आते हैं। यहां तक कि भूमि के ऊपर स्थित जड़ से भी फल निकल आते हैं। फल माघ- फाल्गुन (जून से मार्च) में लगते ओर ज्येष्ठ-आषाढ़ (मई से जुलाई) में पकते हैं।

कच्चे कटहल की तरकारी और कढ़ी बड़ी स्वादिष्ट बनती है। इस का अचार भी बनता है। कच्चा कटहल कब्ज पैदा करता है। पका कटहल अत्यंत स्वादिष्ट होता है और मेवे की तरह खाया जाता है। इसे अधिक प्रमाण में खाने से दस्त शुरू हो जाते हैं। अत्यंत पौष्टिक होने पर भी यह बड़ी कठिनाई से पचता है। परन्तु भलीभांति पच जाने पर शरीर को पुष्ट करता है और कफ, शुक्र, मेद और मांस को बढ़ाता है। कोयों का मुरब्बा और हलवा बल-पुष्टिवर्धक है।

पेट भरा होने पर कटहल नहीं खाना चाहिए। इसके खाने का सर्वोत्तम समय खाली पेट, प्रातः काल है। नियम यह है कि कटहल खाने के बाद यदि पेट में जगह बची हो तो थोड़ा खाना खा लें। भर पेट खाना खाने के बाद कटहल खाना दस्त को बुलाना है।

पके कटहल के बीज कुछ-कुछ कसैले, मधुर और स्वादिष्ट होते हैं। ये कब्ज भी पैदा करते हैं। इन्हें घी में भूनकर खा, हजम कर लेने पर शरीर को पुष्ट करते हैं। ये बीज उत्तम खाद्य हैं और अखरोट जैसे पुष्टिवर्धक हैं।

औषधीय उपयोग -

भस्मक रोग में

- शरीर के अन्दर यकृत् के द्वारा उत्पन्न होने वाला स्राव भूख को बढ़ाने और खाये हुए अन्न का पाचन करने वाला होता है। इस स्राव की मात्रा में अत्यधिक वृद्धि एक रोग है जिसमें खाया हुआ अन्न तुरन्त पच जाता है और फिर भूख लग आती है। यह भूख अत्यंत तीव्र होती है। इसे भस्मक रोग कहते हैं।

ऐसी स्थिति में रोगी को भरपेट खाने को कोये देने चाहिए। साथ ही दिन में कम से कम दो बार उसे ५०-५० ग्राम घी भी पिलाना चाहिए।

यह उपचार अच्छे वैद्य की देखरेख में ही चल सकता है। अन्यथा स्वेच्छा से इस औषध को लेना रोगी के लिए घातक सिद्ध हो सकता है।

जोड़ों का दर्द होने पर

कटहल के कोयों को अलग करने के बाद छिलके में जो मोटी-मोटी सफेद पट्टियां रह जाती हैं उन्हें कूट पीस लें। फिर उसमें अरेंडी का तेल मिलाकर जोड़ों पर दर्द के स्थानों पर लेप करके बांध दें। इससे अचूक लाभ होता है।

पुष्टि के लिए

कटहल के बीजों को धूप में सुखाकर आटे की तरह पीस लें। फिर इसमें उड़द का पिसा हुआ समान भाग आटा मिलायें। इसके बाद इस मिले-जुले आटे को घी में भूनकर गुड़ डाल कर लड्डू बनायें। रोज सवेरे एक लड्डू खाकर दूध पियें।

इससे उत्साह बढ़ता है, मेहनत के कामों में जी लगता है और ताकत बढ़ती है।

पेट दर्द-ऐंठन में

कटहल के पत्तों पर तिल या अरेंडी का तेल चुपड़कर पत्तों को गरम करके और पेट पर बांधने से दर्द समाप्त हो जाता है।

सूजन में

शरीर में जिस स्थान पर दर्द के साथ सूजन हो वहां कटहल के फल का छिलका बांधें। विशेष रूप से ऐसी सूजन, जो दबाने पर दबी रह जाती है इस उपचार से ठीक हो जाती है। एक दिन के अन्दर आराम न आनेपर अपने चिकित्सक से सम्पर्क करें।

कटहल-निषेध

- भूख न होने पर
- अपचन की स्थिति में
- पेटदर्द, दस्त और कृमि होने पर
- रात में तथा
- खाना खाने के बाद।

(वैद्य रमेश म. नानल, बम्बई द्वारा प्रस्तुत जानकारी के आधार पर)

कालजयी- कालमेघ

(वैद्य कृष्ण चन्द्र भूषण, चंडीगढ़ द्वारा प्रस्तुत लेख पर आधारित)

यह ३० सेमी. से १ मी. तक ऊंचा बरसाती पौधा है जो जड़ से लेकर चोटी तक औषध गुणों से भरपूर और स्वाद में अत्यंत तीखा होता है। यद्यपि यह भारत के सभी मैदानी भागों में अपने आप उगता है, बंगाल और आसाम में यह अपेक्षाकृत अधिक होता है और वहां इसकी खेती भी की जाती है। भारत की भिन्न-भिन्न भाषाओं में प्रचलित इसके कुछ नाम नीचे दिये जा रहे हैं-

संस्कृत- कालमेघ, भूनिंब, यवतिक्ता; हिन्दी- कालमेघ; उड़िया- भूनीम; मराठी- ओली किर्याता; गुजराती- लीलुं कारियातुं; तमिल व तेलुगु- नीलवेपु; मलयालम- नेलवेपु; अंग्रेजी- ग्रीन चिरेटा; लैटिन- ऐंड्रोग्रैफिस पैनिक्युलेटा।

कालमेघ का पौधा हरे रंग का, चिकने तने वाला, चौपहल, रोएंदार, रस-स्रावि और गांठों पर विशेष मोटा होता है। इसकी पत्तियां ३.५० से.मी. से ६.५० से.मी. तक लम्बी, आमने-सामने रेखाकार, अटूट और सिरे पर भाले जैसी नोकदार होती हैं। इसके छोटे-छोटे फूल सफेद रंग के बीच में लालधारी युक्त देखने में खुले हुए होंठों की तरह होते हैं। फल १.५० से.मी. से २ से.मी. तक लम्बे और जौ की शक्ल में होते हैं। फलों के आकार (यवाकार) तथा पौधे के स्वाद (तिक्त) के आधार पर इसे संस्कृत में यथागुण नाम 'यवतिक्ता' दिया गया है।

बरसात के मौसम की समाप्ति के बाद जाड़े के आने से पहले संम्पूर्ण पौधों का संग्रह करके छाया में सुखाकर रख लेना चाहिए। इसकी तासीर गरम और शुष्क है। लेक्टिन का कालमेघ देखने में चिरायता के समान होती है अतः कई बार बाजार में इसे चिरायता में मिलावट करके भी बेचते हैं जबकि गुण के आधार पर कालमेघ को आयुर्वेद में चिरायता से हीन माना गया है। बच्चों की यकृत क्रिया में यह विशेष गुणकारी है अतः इसका उपयोग यकृत के बढ़ जाने में और कामला में अधिक कर सकते हैं (देखें कामला पर लेख)।

समस्त भारत में पैदा होने वाली इस वनस्पति को हम वटी बना कर भी रख सकते हैं। कालमेघ के १०० ग्राम पत्तों को १० ग्राम कालीमिर्च के साथ पीसकर पानी की मदद से चने के आकार की गोलियां बनाकर धूप में सुखा लें। ज्वर के लक्षण होते ही २ गोली गुनगुने पानी के साथ देने से मलेरिया व अन्य ज्वरों (बदलते मौसम के) में भी लाभ होता है।

अनुसंधानों से यह बात सामने आयी है कि यकृत् (जिगर) के विकारों पर इससे बढ़कर कोई औषध नहीं है। मलेरिया और चर्मरोगों में भी इसका प्रयोग करते हैं। यह अपच और कब्ज को भी दूर करता है। उक्त रोगों में कालमेघ का सेवन स्वरस, चूर्ण अथवा क्वाथ के रूप में (स्वरस, चूर्ण तथा क्वाथ बनाने की विधि कृपया 'जीवनीय' के प्रवेशांक में देखें) दिन में दो-तीन बार निम्न मात्राओं में करना चाहिए-

स्वरस	५-१० मिली.
चूर्ण	१-३ ग्राम
क्वाथ	२० से ४० मिली.

मलेरिया के रोगी को कालमेघ उसकी

(शेष पृष्ठ १७ पर

कुलत्थ (कुलथी)

-प्रो. जयराम यादव, अतर्रा

कुलथी का जमीन पर फैलने वाला पौधा वार्षिक फसल देने वाला होता है। इसके अण्डाकार पत्ते २.५ सेमी. लम्बे होते हैं व फूल १-३ सेमी. तक लम्बे, हल्के पीले रंग के तथा पुंकेसर पर लाल बिन्दु युक्त होते हैं। फूलों की संख्या एक साथ एक से चार तक होती है। इसकी फली एक से २ इंच तक लम्बी, चपटी, टेढ़ी तथा जिसमें मटमैले रंग के ५-६ चपटे, अण्डाकार, १/२ इंच से चौथाई इंच तक लम्बे बीज होते हैं। सितम्बर-नवम्बर में पुष्प और अक्टूबर-दिसम्बर में फल आते हैं। इसके बीज का प्रयोग दाल के रूप में तथा जानवरों के खिलाने के लिए भी होता है।

इसकी चार जातियां १- श्वेत, २- रक्त, ३- कृष्ण और ४- चित्र होती है। इसके अतिरिक्त वन्य और ग्राम्य भेद से भी दो प्रकार बताये गये हैं।

इसकी उत्पत्ति समस्त भारत में होती है पर विशेष रूप से मद्रास, मैसूर, राजस्थान, महाराष्ट्र और आंध्र में पांच हजार फीट की ऊंचाई तक और उत्तर भारत के पहाड़ी इलाकों में होती है। विभिन्न भाषाओं में इसका नाम निम्न प्रकार हैं-

हिन्दी- कुलथी, संस्कृत- कुलत्थ, मराठी-कुलीथ, गुजराती-कलथी, तमिल-कोल्लु, तेलुगु- उलावलु, कुमाऊंनी एवं गढ़वाली- धौत, मलयालम- मुतेर, कन्नड़-हुरलि, बंगला- कुर्थिकलाई, अंग्रेजी-हार्सग्राम, लैटिन- मैक्रोटाइलोमा यूनिफ्लोरम (डालिकस बाइफ्लोरस)

यह पसीना लाती है तथा शोथ को दूर करती है। यह पेट से गैस को बाहर निकालती है, मल के अवरोध को तथा पेट के कीड़ों को दूर करती है। यह गर्भाशय को उत्तेजित करती है अतः गर्भावस्था में स्त्रियों व जानवरों को इसे नहीं खिलाना चाहिए। यह पेशाब अधिक लाती है और पथरी को गला कर बाहर निकालती है।

पेट फूलना, पेट में दर्द, वायुगोला, बवासीर, पेट के कीड़े तथा यकृत् और प्लीहा की बीमारियों में इसका प्रयोग होता है। इसका अधिक प्रयोग करने पर पित्त अधिक बनने लगता है, अतः खाने में अधिक प्रयोग नहीं करना चाहिए।

जुकाम, खांसी और श्वास (दमा) में इसके प्रयोग से लाभ होता है। अधिक हिचकियां आने पर इसका धूम्रपान किया जाता है।

प्रसव के बाद गर्भाशय शोधन के लिए इसके प्रयोग से बहुत लाभ होता है।

अश्मरी (पथरी) बस्तिशूल तथा कष्ट के साथ रुक-रुक कर पेशाब होने की स्थिति में इसका पानी पिलाने से लाभ होता है। पथरी में इसका चूर्ण मूली के पत्ते के रस के साथ देने से अच्छा लाभ देखा गया है। इसके बीज के चूर्ण के प्रयोग की मात्रा ३ से ६ ग्राम तक है। •

जब डाइनामाइट तथा बारूद का आविष्कार नहीं हुआ था तब कई प्रकार के वानस्पतिक द्रव्यों का प्रयोग चट्टानें तथा बड़े पत्थरों को तोडने के लिए किया जाता था जिनमें से एक कुलथी भी थी। चट्टान या पत्थर पर एक पतला व गहरा गड्ढा बनाया जाता तथा उसमें कुलथी भर दी जाती थी। फिर उसमें पानी भर कर कपड़े का डाट लगा कर गड्ढे का मुंह बंद कर दिया जाता था। लगभग दो या तीन दिन पश्चात् पत्थर या चट्टान पर बड़ी-बड़ी दरारें पड़ जाती थीं फिर आसानी से उसे तोड़ लिया जाता था। शायद इसी गुण को देखते हुए इसका प्रयोग पथरी रोग में किया जाने लगा।

कुलथी के कुछ सरल प्रयोग पथरी के लिए इस प्रकार हैं:-

- कुलथी का काढ़ा बोतल में भर कर दिन में लगभग (१५-२० मिली) ७ या ८ बार पीने से मटर के दाने के बराबर की पथरी टूट टूटकर बाहर आ जाती है। इसके क्वाथ में भुनी हुई हींग २०० से ५०० मिग्रा, सोंठ चूर्ण तथा काला नमक १-१ ग्राम मिलाने पर काढ़ा स्वादिष्ट एवं अधिक प्रभावशाली बन जाता है।
- कुलथी चूर्ण (२ ग्राम) शिलाजीत (१०० मिग्रा) मिलाकर दिन में लगभग दो बार लेने से वृक्क शूल, पेशाब की जलन तथा पथरी में लाभ होता है।
- उत्तर प्रदेश के पहाड़ी भाग में कुलथी का चलन दाल के रूप में अधिक है। कुलथी बरसात आरम्भ होने से पूर्व बोई जाती है तथा अक्तूबर-नवम्बर में इसकी फसल होती है। इससे प्राप्त विभिन्न रक्त ग्रुपों की पहचान के लिए विशेषकर प्रयोग किया जाता है।

उड़ीसा, बिहार तथा मध्य प्रदेश के आदिवासी जाड़ों में गॉव की हाटों में इसे बेचते हैं।

• डा. निरंजन चन्द्र शाह

भूम्यामलकी

भारत के सभी भागों में बरसात में अपने आप उगने वाला एक छोटा पौधा है जिसका तना सीधा रहता है। इसके कुछ प्रचलित नाम नीचे दिये जा रहे हैं-

हिन्दी, मराठी और बंगला- भुई आंवला; संस्कृत- भूधात्री, भूम्यामलकी; गुजराती- भोय आंवली; लैटिन- फाइलैन्थस नेरुरी।

भूम्यामलकी के सभी (पांचों) अंग औषध हैं। यह पूरे शरीर पर प्रभाव भी करती है, विशेष रूप से यकृत् पर। इसकी पत्तियां छोटी-छोटी होती हैं और जुलाई-अगस्त में इस पर सफेद फूल आते हैं। इसके फल देखने में आंवले जैसे किन्तु आकार में उससे बहुत छोटे होते हैं। इन फलों में छोटे-छोटे बीज पाये जाते हैं। यह वनस्पति पेशाब तथा पसीना बढ़ाने वाली और स्वाद में कड़वी है।

उगाने की विधि

भूम्यामलकी के पके हुए फलों से बीजों को इकट्ठा करके वर्षा ऋतु में बोते हैं। इसका पौधा बरसात में किसी भी प्रकार की मिट्टी में उग सकता है। यकृत् की प्रसिद्ध औषधि होने से बाजार में इसकी मांग अच्छी है। बरसात के बाद जड़ सहित सम्पूर्ण पौधे को उखाड़कर छाया में सुखाकर संगृहीत किया जा सकता है।

मात्रा

१-चूर्ण	३-६ ग्राम
२-स्वरस	१०-२० मि.ली.
३-क्वाथ	४० से १०० मि.ली.

प्रयोग

खांसी और सांस लेने में कष्ट होने पर दिन में दो बार स्वरस लें। शरीर के किसी भाग में शोथ (जलनयुक्त सूजन) होने पर भी स्वरस लेने से लाभ होता है। भूख की कमी या पेट दर्द की शिकायत में भी भूम्यामलकी लाभ करती है। पीलिया के रोगी को जड़ सहित पूरे पौधे से निकाला गया स्वरस देना चाहिए।

खुजली में प्रभावित भाग पर भूम्यामलकी के पत्तों की पुल्टिस नमक मिलाकर बांधने से शिकायत दूर होती है। शरीर के किसी अंग में दर्द होने पर वहां पत्तों की लुगदी लगाकर पट्टी बांध देने से दर्द दूर होता है। इसके स्वरस के सेवन से घाव शीघ्र भर जाते हैं।

कामला (पीलिया) में १५ ग्राम ताजी जड़ को गाय के दूध के साथ पीसें व छाने रस को दिन में दो बार पिलाना चाहिए।

ऐसे बुखार में, जो कभी सरदी तथा कभी गरमी के साथ आवे, जिसका आरम्भ, अंत और समय अनियमित हो तथा जो एक बार ठीक होने के बाद पुनः हो जाये ऐसे विषम ज्वर में भूम्यामलकी के पंचांग का काढ़ा देना चाहिए। इससे पेट साफ होता है, पसीना आता है, नींद अच्छी आती है और ज्वर ठीक हो जाता है।

तिल्ली और जिगर के बढ़ने की बीमारी में भी भूम्यामलकी का सेवन लाभकारी है। पेशाब में कष्ट और दाह होने पर सूजाक में इसका स्वरस सुबह-शाम लेना चाहिए।

रक्त प्रदर तथा माहवारी खून अधिक जाने की शिकायत में जड़ को पीसकर चावलों के पानी के साथ लेने पर रक्तस्राव बंद हो जाता है।

एक यूनानी दवा- लहसुन

हकीम एम.आर. किदवई और
ए.बी. अल्वी

मानवीय जीवन में अनेक प्रकार की तकलीफें और बीमारियां होती हैं। अनेक प्रकार के बचावों के बावजूद कीटाणुओं के प्रभाव में आकर मनुष्य बीमार हो जाता है। अपनी रोजमर्रा की जिंदगी में हम अनेक औषध-पदार्थों का प्रयोग करते हैं पर उनके औषधि -गुणों को नहीं जानते हैं, जैसे लहसुन, जिसे भोजन में मसाले के तौर से प्रयोग किया जाता है। वस्तुतः यह वनस्पति उच्च औषधीय गुणों से सम्पन्न है।

लहसुन का कंद कई छोटे-छोटे प्रकंदों (कोयों) से बनता है। इसकी नुकीली पत्ती जमीन से ऊपर की ओर निकलती है पर तने को ढके रहती है। भारत में इसकी अनेक प्रजातियां पाई जाती हैं।

भाषागत नाम

हिन्दी- लहसुन, संस्कृत- लशुन, मराठी- लासुन , बंगला- रशुन, तेलुगु- वेल्लुलि तेल्ला गड्ड।

लहसुन के कुछ औषधीय उपयोग

यूनानी पद्धति में इसका उपयोग गले की खराश, कीटाणुनाशक और पेट की बीमारियों के इलाज में किया जाता है। इसके कुछ उपयोग निम्न हैं-

- लहसुन के रस को चार गुने पानी में मिलाकर जख्म धोने के काम में लाते हैं।
- लहसुन के कोए को लुग्दी बनाकर चौगुने अरंडी के तेल में मिलाकर २० मिनट तक उबालने के बाद ठंडा करके छान लें। इस तेल की मालिश से गठिया, नसों का दर्द (शियाटिका) व कमर के दर्द में लाभ होता है।
- मियादी बुखार (टायफाइड) में लहसुन के रस को १० गुना पानी में मिलाकर हर ६ घण्टे बाद २०-२५ मिली. पीने को देते हैं। लाभ न होने पर कुशल चिकित्सक को सम्पर्क करें।
- गलघोंटू (डिप्थीरिया) के शुरू में लहसुन की कली (कोये) को छीलकर चबाने या इसके रस को गुनगुने पानी के साथ पीने से लाभ होता है।
- काली-खांसी (व्हूपिंग कफ) में लहसुन के कोयों को पीसकर दोगुने शहद के साथ मिलाकर चाटने से लाभ होता है।
- पेट के गैस, अफारा होने पर भी लहसुन की एक कली को पानी के साथ निगलने से फायदा होता है। कई सब्जियों जैसे बैंगन, दालों (जैसे अरहर) व मांस-मछली को पकाते समय लहसुन का छौंक लगाने से इसका पाचन ठीक होता है

कालमेघ-कुछ और भी

(पृष्ठ १४ का शेष)

आधी मात्रा में काली मिर्च के साथ देना चाहिए।

बंगाल में बच्चों को अतिसार, पेट दर्द, वमन आदि में 'आलुई' नामक योग देने की परम्परा है जिसमें जीरा, अजवाइन, लवंग, जायफल और बड़ी इलायची के बीज इन सबके चूर्ण को कालमेघ के स्वरस के पांच-सात छीटों (भावनाएं) के साथ पीसकर २-२ डेसीग्राम की गोलियां बनाकर मां के दूध में मिलाकर देते हैं।

यदि चैत्र (मार्च-अप्रैल) में कालमेघ के ५० ग्राम पंचांग को १० कालीमिर्च के दानों के साथ कूट कर मिश्रण बनाकर सुबह शाम १-२ ग्राम का सेवन १५ दिन लिया जाय तो साल भर तक फोड़े फुंसियों से बचा जा सकता है। वैसे भी फोड़े-फुंसी या त्वचा के सामान्य विकारों में कालमेघ के पत्ते (या पंचांग) का ३ ग्राम स्वरस एक चम्मच शहर के साथ पीने से खून साफ होता है और चर्म विकार दूर हो जाते हैं।

सर्वप्रिय जामुन

जामुन के वृक्ष भारत के प्रत्येक प्रान्त के बागों, जंगलों में तथा नहरों व सड़कों के किनारे बहुतायत से पाये जाते हैं। हरी, चिकनी और सघन पत्तियों से भरा हुआ जामुन का वृक्ष बहुत सुहावना लगता है। वर्षा ऋतु के प्रारम्भ में (जून अंत से जुलाई) जब जामुन के फल पकते हैं तब छोटे-बड़े सभी इन काले-काले, चिकने रसदार फलों को स्वाद से खाते हैं। जामुन की छाल, पत्ते, फल, फलों की गुठली आदि सभी अंग औषधि गुण सम्पन्न होते हैं।

लगभग सारे देश में पाया जाने वाला जामुन का वृक्ष सदैव हरा-भरा रहने वाला लगभग ३० मी. ऊंचा तक होता है। जामुन के पत्ते ८-१० से.मी. लम्बे, चिकने तथा चमकदार होते हैं। ये पत्ते आमने-सामने जोड़े में लगते हैं। बसंत ऋतु में जामुन के फूल हरियाली छटा वाले सफेद रंग के गुच्छों में आते हैं। फिर इन्हीं फूलों में हरे रंग के फल निकलते हैं जो धीरे-धीरे बढ़ते हुए गर्मी के मौसम के अंत में (जून-जुलाई) पकने लगते हैं। वर्षा हो जाने पर जामुन के फल बड़ी शीघ्रता से पक जाते हैं तथा रसीले हो जाते हैं। ये फल २-४ से.मी. लम्बे, अंडाकार (कच्ची अवस्था में हरे- कुछ पकने पर लाल बैंगनी रंग के) और अच्छी तरह पक जाने पर गहरे नीले- काले रंग के होते हैं। इन फलों में एक गुठली होती है। जामुन की कई जातियां-उपजातियां होती हैं। इनमें राज जम्बु (बड़ा- जामुन) व क्षुद्र जम्बु (छोटी जामुन या कठजामुन) अधिक मिलती हैं। बड़े जामुन के फल को फलेंदा कहते हैं।

विभिन्न भाषाओं में नामः-

संस्कृत- जम्बू, राजजम्बू, बृहत्फला, हिन्दी नाम- जामुन, फलेंदा व कठजामुन ,मराठी- थोर, जाम्भूल, गुजराती- जाम्बुन, बंगला- कालजाम, तामिल- नागै, सम्बल, कन्नड़- नेरले, तेलुगु- नेरडु, अंग्रेजी- जाम्बुल ट्री, ले. नाम- सिजि़जियम क्यूमिनाइ।

औषधीय गुण तथा उपयोग

जामुन की गुठली का चूर्ण २ ग्राम की मात्रा में दिन में एक बार प्रातःकाल लेने पर मधुमेह रोग में काफी लाभ मिलता है। इसका एक सप्ताह तक प्रयोग करने के बाद खून की जांच करा लेनी चाहिए। यदि खून में शक्कर की मात्रा सामान्य हो जाये तो फिर इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

जामुन का सिरका बनाने की विधि

सिरका बनाने के लिए अच्छे पके हुए ताजे जामुन के फलों का रस लेना चाहिए। इसके लिए जामुन के फलों का रस ५ किलो लेकर उसमें पिसा नमक ६० ग्राम मिला देते हैं फिर इस नमक मिले रस को एक मिट्टी के घड़े में रखकर उसके मुंह पर कपड़ा बांधकर, धूप में कुछ दिनों के लिए रख देते हैं। इस प्रकार रखने पर स्वच्छ सिरका ऊपर आ जाएगा। इस सिरके को निथार कर साफ बोतलों में भर लेते हैं।

इस सिरके को २० ग्राम तक की मात्रा में बराबर का पानी मिलाकर पीने से पेट का दर्द, गैस व अजीर्ण आदि पेट के रोग दूर होते हैं तथा खाया हुआ खाना भी पच जाता जाता है।

(उ.च.श.)

जामुन की गुठली का चूर्ण (२-५ ग्राम) पुराने दस्त व थोड़ा- बहुत खून आने वाले दस्तों में लाभकारी होता है।

जामुन की छाल कषाय (कसैली) तथा स्तम्भक होती है। इस गुण के कारण इसका प्रयोग अतिसार (पतले दस्त) में करना चाहिए। इसके लिए इसकी साफ छाल को लेकर महीन चूर्ण बना लेते हैं। इस चूर्ण की १-२ ग्राम मात्रा, दिन में दो या तीन बार तक सादे जल के साथ लेते हैं।

जिन लोगों को बार-बार पेशाब लगती है, उन्हें जामुन की छाल का चूर्ण दिन में एक या दो बार, २ ग्राम की मात्रा में पानी के साथ सेवन करना चाहिए।

चोट लग जाने पर यदि खून निकलता है तो उस जगह पर गुठली का चूर्ण रखकर पट्टी बांधने से खून का बहना रुक जाता है तथा साथ में घाव भी भर जाता है।

सावधानी

जामुन के फलों को खाली पेट नहीं खाना चाहिए। खाली पेट रहने पर यदि पेट भरकर जामुन खा लिया जाता है तो पेट में अफारा या गुडगुड़ाहट तथा पेट दर्द होने लगता है। अतः भोजन के बाद नमक, धनिया और कालीमिर्च के चूर्ण के साथ इसे थोड़ी मात्रा में खाना चाहिए।

यदि जामुन को सवेरे खाना हो तो पहले कुछ पके हुए अच्छे आम खा लेना चाहिए। आम खा लेने के बाद १०-१५ जामुन खा लेने से अफारा नहीं होता और आम भी अच्छी तरह पच जाता है। ■

(वैद्य एम.एल. कपूर, लखनऊ द्वारा प्रस्तुत लेख पर आधारित)

पका हुआ आम

पं. काशीनाथ गोपाल गौरे, लखनऊ

भारत का सर्वप्रसिद्ध और सबसे स्वादिष्ट फल के रूप में आम जाना जाता है। यह मई से अगस्त तक पूरे देश में बहुतायत से पाया जाता है। पका आम अधिक समय तक नहीं रखा जा सकता है इसलिए इस मौसम में आम काफी सस्ता होता है। इस प्रकार यह आम आदमी के उपयोग में आकर अपने नाम को सार्थक करता है।

यद्यपि आम दक्षिण-पूर्व एशिया के कुछ अन्य देशों में भी पाया जाता है पर आम का विकास भारत में सबसे अधिक हुआ है। सम्भवतः इसीलिए लैटिन में भी इसका नाम मैंगीफेरा इंडिका पड़ा जो तमिल शब्द मांगामरम (आम का पेड़) पर बनाया गया। वैसे आम शब्द संस्कृत के आम्र से बना है और इसके अन्य प्रचलित नाम निम्न है-

बंगाली- आम, पंजाबी- अंब, फारसी- आंबा, गुजराती- आंबो, कन्नड़- माविन हण्णु।

भारत में दो प्रकार के आम पाए जाते हैं- देसी या तुख्मी और कलमी। देसी आम प्राकृतिक रूप में बीज से निकले पौधे में होते हैं जबकि कलमी आम तो पौधे की कलम काटकर लगाने से ही निकलते हैं। देसी आम देखने में छोटे परन्तु रस भरे होते हैं अतः चूसकर खाए जाते हैं और उनमें रेशे भी होते हैं। कलमी आम अधिक गूदेदार होते हैं अतः काटकर खाए जाते हैं।

आम के गुण और उपयोग

पके आम में कई प्रकार की शर्कराओं के अतिरिक्त कुछ अम्ल, लवण और विटामिन भी होते हैं। विशेषकर यह विटामिन 'ए' का अच्छा स्रोत है। अतः यह रतौंधी जैसी आख की बीमारी के लिए काफी लाभकारी है। दिन ब दिन सस्ती किस्म के देसी (तुख्मी) आमों की कमी के कारण यह धीरे-धीरे गरीबों की पहुंच के बाहर होता जा रहा है। हमारे देश के बच्चों में फैली विटामिन ए की कमी को दूर करने में आम के पेड़ों का विस्तार काफी सहायक हो सकता है।

पके आम का रस अत्यंत बलवर्धक है। यह आयुर्वेद के मतानुसार मधुर, शीतल एवं धातुवर्धक है। यद्यपि इसे त्रिदोषनाशक बताया गया है पर यह कुछ-कुछ कफवर्धक है। अग्निदीपक होने के कारण यह भूख बढ़ाता है और अरुचि को दूर करता है। अपनी शीतल प्रकृति के कारण यह लू लगने (या अन्य प्रकार के दाह में भी) या पित्त बढ़ने की स्थिति में लाभकारी है। इसे हृदय के लिए भी लाभकारी बताया है। परन्तु इसके अधिक सेवन से दस्त एवं आंव की शिकायत हो सकती है। ऐसी मान्यता है कि आम के सेवन के बाद कुछ दूध पीने से या कुछ जामुन खाने से आम जल्दी पच जाता है। स्वास्थ्य की दृष्टि से देसी चूसने वाला आम अधिक हितकारी माना जाता है। आम का सेवन करने से पहले आम को दो तीन घण्टे तक पानी में भिगो कर रखने से इसके हानिकारक तत्व कम हो जाते हैं।

ठंडाई के साथ और दूध के साथ भी आम के रस का सेवन लाभकारी है। महाराष्ट्र व कुछ अन्य हिस्सों में आम के रस या टुकड़ों को पानी निकाले दही में शक्कर मिलाकर 'आम्रखंड' बनाकर भी सेवन करते हैं। पूरे देश में आम के रस को सुखाकर अमावट (आम-पापड़) बनाकर रखने का भी रिवाज है, जो साल भर खाया जा सकता है (बनाने की विधि देखें पृष्ठ २०)। आजकल तो आधुनिक तकनीक से आम का रस डिब्बों या बोतलों में बंद करके भी साल भर तक मिलने वाले पेय के रूप में खूब प्रचलित हो रहा है।

अमावट बनाने की विधि

पके आम के रस अथवा गूदे से अमावट बनाने की विधि पुराने समय से चली आ रही है। अमावट बनाने के लिए बीजू आम ही प्रयोग में लाना चाहिए कलमी आम का प्रयोग बीजू आम न मिलने की दशा में ही करें।

सर्वप्रथम पके हुए फलों को पानी में भली-भांति धो लें। चेप को चाकू से निकाल दें। चेप निकालकर थोड़ा सा रस अलग टपका दें। फलों का रस निकालने से पहले साधारण दस्ताने अवश्य पहन लें। आम के रस को स्टेनलेस स्टील, अथवा ताम-चीनी के बर्तनों में ही निकालें। इससे रस में खराबी नहीं आती है। प्राप्त रस को एल्युमिनियम या स्टील की जाली से छान लें। छानने से रस एकरस हो जाता है और रेशे भी बाहर रह जाते हैं।

रस को आंच पर चढ़ा कर इतना गर्म करते हैं कि उबाल न आने पायें। रस ठंडाकर उसमें प्रतिकिलोग्राम में ५० ग्राम के हिसाब से शक्कर मिला कर अच्छी तरह हिलाते रहना चाहिए। अंत में एक किलो रस में एक नींबू निचोड़ कर मिला दें। इस रस को सुखाने से अमावट बनता है।

इसे सुखाने के लिए लोहे की कलईदार चद्दरों से निर्मित ट्रे सर्वथा उपयुक्त होती है। घरों में प्रतिदिन इस्तेमाल में आने वाली थाली भी काम में लाई जा सकती हे। पहले इनमें घी या खाने वाला कोई तेल लगा दें तब रस की एक पतली तह (लगभग ५ सेंमी मोटी) ट्रे या थाली में फैला दें और इसे कड़ी धूप में सूखने के लिए रख दें। एक तह सूखने पर इसके ऊपर रस की दूसरी तह फैला दें। यह क्रिया तब तक दोहराते रहें जब तक सूखे रस की पर्त एक सेमी मोटी न हो जाये। यदि लगातार धूप मिलती रही तो यह क्रिया १०-१२ घंटों में पूरी हो जाती है। अमावट धूप में सूखते समय ऐसे स्थान पर रखें जहां सफाई हो व उसे झीने कपड़े या जाली से ढक कर रखें। आमरस इतना सुखाना चाहिए कि उंगली से दबाने पर दब न सके परन्तु जरूरत से ज्यादा सुखाने अथवा कई-कई दिन तेज धूप में रखने पर अमावट अधिक सूखकर कड़ी हो जाती है।

सूखी अमावट को निकालकर एक के ऊपर एक रखकर लगभग ३ से.मी. मोटी चद्दर लगाते हैं फिर इस मोटी चद्दर के ऊपर व नीचे कपड़ा लगाकर किसी भारी वस्तु से दबाते हैं। दबाने से अमावट दो से ढाई से.मी. तक मोटी रह जाती है। इस मोटी चद्दर में से ८×१० से.मी. के टुकड़े काट लिये जाते हैं। इन टुकड़ों पर हल्का सा व्हाईट आयल या खाने वाला तेल लगाकर एक सा कर लेना चाहिए और फिर मोमिया या सेलोफेन का कागज लपेट देना चाहिए। तैयार अमावट को शीशे के बर्तनों में रखना चाहिए। अमावट को नमी तथा गर्मी से बचाए रखें। इसे काफी दिन तक रखा जा सकता है।

(रो.मा.)

आम के आम गुठलियों के दाम

हिचकी तथा गले की बीमारियों में आम के पत्तों का धुआं सूंघना आवश्यक है। आम की सूखी हुई मंजरियां अपने स्तंभक गुण के कारण दस्त, पेचिश तथा पित्ताशय और आंत की बीमारियों में लाभ करती हैं।

पेड़ की छाल से जो गोंद निकलता है वह पैरों की बिवाई और खाज पर मलहम का काम करता है। उपदंश (आतशक) रोग के लिए भी यह औषधि मानी जाती है।

आम की पत्तियां, छाल, टहनी और कच्चे आम का स्वरस 'माइक्रोकोकस पाइरोजेनेस वार औरियस' नामक जीवाणु का किसी हद तक प्रतिरोध करता है। पके हुए आम में फंगसरोधी सूक्ष्मजीवों की उपस्थिति बतायी जाती है। अतः आम में कीटाणु नाशक गुण भी पाये जाते हैं।

आम की गिरी का चूर्ण कृमिनाशक है तथा इसका खूनी बवासीर में स्तंभक के रूप में भी प्रयोग किया जाता है।

(र.श.)

लोस्वापसंस

लोग कह रहे जीवनीय का, देखा सुन्दर रूप
स्वागतयोग्या लगी पत्रिका, ज्यों जाड़े की धूप
परवल पेठा स्वरस कल्पना, तक्र दूब अतिसार
संदल, बेल, नाक की सेवा, पानक विविध प्रकार
सल्लू अदरक और करेला, रक्तस्राव उपचार

जी वनीय

जीना मनुज मात्र का सम्भव, स्वस्थ सुखी सौ साल
वर्षा शरद आदि ऋतु चर्या, का यदि रखें ख्याल
नीम, गिलोय, पिप्पली, हर्रे, जामुन, मीठे सेव
यष्टी मधु एरंड, आंवला, सेवनीय अतएव

-एक पाठक

घुइयां

वैद्य अरविन्द शुक्ल , लखनऊ

य ह एक प्रसिद्ध कन्द है जो अपने स्वाद एवं मधुरता के कारण बड़े चाव से मुख्य रूप से सब्जी के रूप में खाया जाता है। यह नदी, तालाब, नहर, दलदल के आस-पास, नल, कुएं के किनारे तथा जगलों में नमी वाली छायादार जगहों के पास जंगली अवस्था में पाई जाती है। इसकी खेती देश के कुछ भागों में की जाती है। फाल्गुन (फरवरी-मार्च) मास में गोबर की खाद एवं अन्य उर्वरकों को मिट्टी की किस्म के अनुसार उचित मात्रा में खेत में डालकर इसकी गांठ मिट्टी में गाड़ देते हैं। यह वास्तव में भूमि के अन्दर पाया जाने वाला कंद है जिसे ६० से.मी. से ८० से.मी. की दूरी पर बोना चाहिए। बोने के १०-१५ दिन में इसकी पत्ती निकलने लगती है। इसकी सिंचाई, गुड़ाई एवं निराई यथासमय करना फसल के हित में है। इसका उत्पादन औसतन ५ कुन्तल प्रति एकड़ का या जैसी खेती हो उसी के अनुरूप घट-बढ़ सकता है।

इसका छोटा पौधा एक वर्षीय होता है। पत्ते का डण्ठल,जो भूमि में रहने वाले कंद से निकलता है ५० से.मी. से १२५ से.मी. तक लम्बा एवं पत्ता छायादार होता है। पत्ते का ऊपरी भाग चिकना होता है। यह पत्तों के आधार पर दो वर्गों में बांटा गया है। पहले वर्ग में पत्ते का रंग गहरे बैंगनी तथा दूसरे वर्ग में पत्ता एवं डण्ठल हरे रंग का होता है। नदी तालाब एवं दलदल में बैंगनी रंग वाली घुइयां अधिक मिलती है जिसका मुख्य प्रयोग सब्जी के रूप में किया जाता है परन्तु कुछ प्रयोग औषधि की तरह भी होते हैं।

घुइयां की उपयोगिता

घुइयां खाने से कम या अधिक जीभ में चरपराहट एवं गले में चुभन जैसी पीड़ा होती है। इसके पत्ते एवं डण्ठल में भी चरपराहट होती है जिसको दूर करने के लिए खट्टे पदार्थ या घी का प्रयोग करते हैं।

कामला के रोगी को पहचानने के लिए घुइयां का कच्चा कंद खिलाते हैं। ऐसे रोगी को जीभ में चरपराहट एवं गले में चुभन जैसी पीड़ा का अनुभव नहीं होता है तथा रोगी उसका स्वाद मधुर बताता है।

प्रचलित नाम

हिन्दी- अरुई, घुइयां; बंगाली- काचू; मराठी- अल्वाय; कन्नड़- केसवे; तामिल- शिपेल; तेलुगू- चम्मडुम्पा; अंग्रेजी- ग्रेट लीव्ड; लैटिन- कोलाकेसिया एंटीगुओरम।

गुण एवं प्रयोग

यह स्निग्ध एवं भारी है। घुइयां का प्रयोग आषाढ़ एवं श्रावण (अप्रैल-जून) में औषधि के रूप में अल्प मात्रा में करने से यह रुचिवर्धक तथा बलवर्धक होती है।

इसको आग में भूनकर, छीलकर, हल्की भुनी अजवायन, कालीमिर्च एवं नमक डालकर मसल कर खाया जाता है। इसी तरह उबालकर भी इसका प्रयोग करते हैं जिसमें सेंधा नमक एवं घी भी डालकर अल्प मात्रा में उपवास के बाद पथ्य के रूप में भी करते हैं।

घुइयां के नये पत्तों का साग लहसुन, धनिया एवं हींग डालकर तेल में पकाकर औषधि की तरह कम मात्रा में प्रयोग करने से यकृत वृद्धि एवं बवासीर के रोगी को लाभ होता है। भाद्रपद (अगस्त-सितम्बर) में इसका प्रयोग वर्जित है। घुइयां एवं पूड़ी का प्रयोग क्वार (सितम्बर-अक्टूबर) मास में अल्प मात्रा में बलवर्धक परन्तु लगातार अधिक दिनों तक करने से आंव दस्त एवं शरीर में पीड़ा देने वाला है। घुइयां के प्रयोग के साथ अजवायन अवश्य लेना चाहिए जिससे आंतों में चिकनापन कम होता है। इसकी गरिष्ठता को भी अजवायन दूर करती है।

इसके पत्ते का स्वरस रक्तस्राव को कम करता है। चोट के स्थान पर स्वरस का प्रयोग रक्तस्राव को बंद कर घाव जल्दी पूरा करता है। फोड़े की गांठ पर इसके डण्ठल को नमक के साथ पीसकर बांधने से या तो गांठ बैठ जाती है या पककर मवाद निकल जाता है।

कुछ स्वादिष्ट एवं लाभकारी चूर्ण-

निर्माण एवं सेवन विधियां

वैद्य लक्ष्मीकांत कुलकर्णी

पाचन चूर्ण काशी हिन्दू विश्वविद्यालय का अनुभूत योग है। यह स्वादिष्ट चूर्ण है। साधारणतया भूख न लगने पर, भोजन में स्वाद न आने पर तथा थोड़े बहुत कब्ज की दशा में इसका सेवन बहुत लाभकारी है। यह पाचन क्रिया को ठीक रखता है। पर यह ध्यान रखें कि किसी बीमारी के दौरान भूख न लगने पर इसका सेवन नहीं करना चाहिए।

निर्माण विधि

पाचन चूर्ण बनाने के लिए नीचे लिखी औषधियां प्रयोग की जाती हैं-

कालीमिर्च	१०० ग्राम
काला नमक	१०० ग्राम
शुद्ध नौसादर	१०० ग्राम
शुद्ध हींग	६.२५ ग्राम

सबसे पहले कालीमिर्च, कालानमक तथा नौसादर को अलग-अलग कूट पीस छानकर एक में मिला दें। उसके बाद देशी घी में भुनी हुई शुद्ध हींग को लेकर कूट पीस कर चूर्ण में ठीक तरह से मिला लें। इस चूर्ण को एक साफ शीशी में बंद करके रख लें।

प्रयोग विधि

इसको दिन में किसी भी समय खाया जा सकता है। परन्तु अधिक लाभ के लिए इसको भोजन के आधा घण्टे पहले चाट-चाट कर खाना चाहिए।

मात्रा

४ से ५ ग्राम- वयस्क स्त्री पुरुष।

१ से ३ ग्राम- छोटे बच्चे- १२ वर्ष की आयु तक के।

हींग शोधन विधि

तवे पर देशी घी पिघलाकर उसमें हींग को डालकर करछुल से हिला-हिलाकर भूनने से हींग शुद्ध हो जाती है। देशी घी इतना ही लिया जाता है जिसमें भूनने के बाद हींग घी को सोख ले तथा देशी घी बाकी न बचें।

हिंग्वष्टक चूर्ण

इस चूर्ण में निम्न आठ औषधियों को बराबर-बराबर भागों में लिया जाता है-

१-सोंठ
२-कालीमिर्च
३-छोटी पीपल
४-अजमोदा (अजवाइन)
५-सैंधव लवण (सैंधा नमक)
६-सफेद जीरा
७-काला जीरा
८-शुद्ध हींग

सबसे पहले प्रथम ७ औषधियों क कूट पीस छान कर मिला लें उसके ब शुद्ध हींग को कूट पीस छानकर मि देना चाहिए। इस चूर्ण को साफ शीशी भरकर रख लेवें।

मात्रा

४-५ ग्राम वयस्क पुरुष- स्त्री।

१-३ ग्राम- १२ वर्ष की आयु तक के बच्चे।

सेवन विधि

इसका सेवन भी किसी समय किय जा सकता है परन्तु अधिक लाभ के लिए भोजन के साथ या भोजन के ठीक पहले इसको खाना चाहिए। इस चूर्ण के सेवन से पाचन क्रिया में निरन्तर सुधार होता चला जाता है।

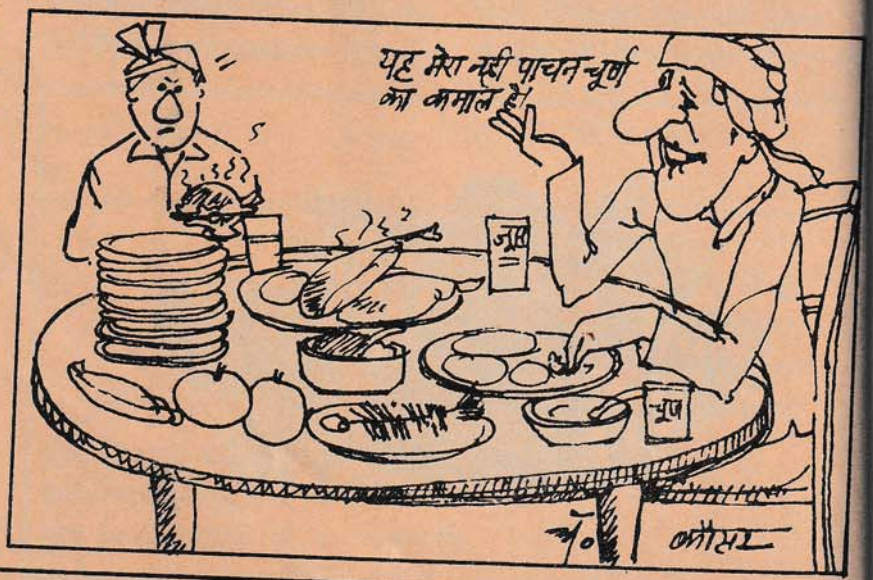

आँखें अच्छी कैसे बनी रहें?

-वैद्य रमेश म. नानल, बम्बई

आँखें मनुष्य की एक महत्वपूर्ण ज्ञानेन्द्रिय हैं। इस में 'चक्षुरिंद्रिय' अर्थात् देखने की शक्ति प्रतिष्ठित रहती है। व्यवहार में हम 'देखने' शब्द का प्रयोग अनेक अर्थों में करते हैं, जैसे छूकर देखना, चखकर देखना आदि। यहां हम 'देखने' को व्यापक अर्थ में 'जान लेने' और 'अनुभव करने' के रूप में लेते हैं। इससे आंखों का महत्व और भी स्पष्ट होता है। नेत्रहीनता जीवन की बहुत बड़ी कमी मानी जाती है और यह ठीक भी है।

ऑखों के रोग बड़े ही कष्टदायक होते हैं। ऑख आना यद्यपि एक सामान्य रोग है, फिर भी उससे भयंकर कष्ट होता है। चक्कर आने, ऑखों के दुखने, सिर दर्द होने और नींद न आने की जड़ में भी प्राय: 'ऑखे' ही हुआ करती हैं। मामूली तकलीफ से लेकर असाध्य रोगों तक के लक्षण आंखों में व्यक्त होते हैं।

उत्पन्न रोग को दूर करने की अपेक्षा रोग को उत्पन्न होने ही न देने के लिए सावधानी बरतना बुद्धिमानी का लक्षण है। इस दृष्टि से आंखों की देखभाल करने का तरीका अच्छी तरह समझ लेना चाहिए।

प्रत्येक रोग में खानपान भी एक अत्यंत महत्वपूर्ण कारण होता है। आयुर्वेद का सिद्धांत है कि बिना दवाओं के समुचित खानपान से अनेक रोग अच्छे हो जाते हैं, और अनुचित खानपान रोग को उत्पन्न करते हैं।

ऑखों की देखभाल

- यदि स्वस्थ व्यक्ति पथ्य (उचित आहार-विहार) से रहे तो उसे नेत्र रोग नहीं होंगे।
- जो माता-पिता चश्मा लगाते हैं उन्हें गर्भाधान के पहले से ही पथ्य का पालन शुरू कर देना चाहिए। ऐसी माताएं बच्चे का स्तनपान छूटने तक पथ्य से रहें।
- मल-मूत्र या गैस निकलने की प्रवृत्ति को न रोके।
- लेट कर पढ़ना, कम प्रकाश में पढ़ना, अत्यन्त बारीक अक्षरों को पढ़ना, लगातार ज्यादा देर तक पढ़ना. हिलती-डुलती सवारी पर बैठ कर पढ़ना, खाना खाते हुए पढ़ना आदि बातें त्याग देनी चाहिए।
- सवेरे सोकर उठने पर अथवा बाहर से घर लौटने पर एक कप गुनगुने पानी में चौथाई चम्मच फिटकरी चूर्ण मिलाकर उससे ऑखों को धोना चाहिए। इससे ऑखों का मैल, कचरा, धूल और विषैली गैसों के सम्पर्क का प्रभाव नष्ट होता है।
- आंखों में थकान का अनुभव होते ही काम बंद कर देना चाहिए।
- रात में यथासम्भव पूर्णतया अंधकार में सोने से आंखों की शक्ति बनी रहती है।
- धूप में घूम फिरकर लौटने पर तुरन्त ऑखों पर ठंडे पानी का छिड़काव न करें।
- बहुत गरम पानी सिर पर डालकर न नहाएं।
- सिर के मध्य भाग की तिल के तेल से मालिश करें और नाक और कान में तिल का तेल बूंद-बूंद डालें।
- पैर के तलुओं में नित्य रात में तेल या घी मलकर सोयें।
- समस्त पथ्यों का कठोरता से पालन करें।

चश्मा छुड़ानेवाले प्रयोग

- यह प्रयोग उनके लिए है जिनके चश्मे का नम्बर एक या उससे कम है। काबुली-लाल अनार के एक प्याली रस में आधा चम्मच भीमसेनी कपूर मिलाकर कांच की शीशी में भरकर अंधेरे स्थान में रखें। इसे २१ दिनों बाद निकालें और हिलायें। यदि झाग बनकर तुरन्त बैठ जाता है तो औषधि तैयार है। एक चम्मच गुलाबजल में इसकी पांच बूंदें मिलाकर नित्य रात में ऑखों पर इसकी पट्टी रखें। यह प्रयोग निरन्तर दो महीने तक करें। इस प्रयोग से कम नम्बर का चश्मा छूट जाता है। जिनके चश्मे का नम्बर एक से अधिक है वे इस प्रयोग को न करें।
- बड़ी काबुली हरड़ को ताजे गोमूत्र में घिसकर रेशमी कपड़े से छानकर ऑखों में सुरमे की तरह लगायें। अंजन लगाते समय इस बात की सावधानी रखें कि उसमें कोई कण न हो।
- बड़ी हरड़ को शहद में घिसकर ऊपर बतायी विधि से ऑखों में लगायें।
- सवेरे दूब पर नंगे पैर एक घंटे टहलना चाहिए।
- रोज रात में नाक में पांच-पांच बूंद गाय का घी डालें।

सामान्य नेत्र रोग और उनके सुलभ उपचार

ऑखें लाल होना

- गुलाबजल, गूलर का पानी (औदुंबर जल), लाल अनार का ताजा रस अथवा दूध इनमें से किसी एक में रुई तर करके आंखों पर पट्टी रखें।
- दूब, जूही के पत्ते, गुलाब की पंखुड़ियां और हरी धनियां इनमें से सहज उपलब्ध चीज को पीसकर चटनी बनायें और ऑखों पर इसकी पट्टी बांधें।
- घीक्वार (अलोय वेरा) को छीलकर उसके सफेद गूदे को ऑखों पर पट्टी की तरह बांधे।

आँखों में चुभन

- बूंद-बूंद करके प्याज का रस आँखों में डालें। इसकी प्रतिक्रिया से आँखों में चुभन कम होती है। यदि इससे लाभ न प्रतीत हो तो यह प्रयोग तुरन्त बंद कर दें।
- सहिजन के पत्तों को पीसकर चटनीनुमा बना लें और हल्का गुनगुना करके आँखों पर बांधें। इसी प्रकार निर्गुंडी (सम्भालू) का भी प्रयोग करें।

अंजन नाभिका (बिलनी)

- हल्दी की गांठ और लौंग को घिसकर दिन में दो बार ठंडा लेप करें।
- अरहर की दाल को पानी में पीसकर ७ दिनों तक लेप करें।
- शहद में सेंधा नमक मिलाकर लेप करें।
- हरी धनिया और सेंधा नमक को पीसकर गोली बनायें और बांधें।

प्रायः आँख आने की तकलीफ में

- प्याज के रस में लाल चंदन घिसकर लेप करें।
- आँखों में गुलाब जल, गूलरजल और लाल अनार का रस छानकर डालें।
- आँखें आने पर प्याज के रस और नींबू के रस का सेवन करें।
- दूसरों को अपने सम्पर्क से बचायें।

नींद अधिक आने में (अतिनिद्रा)

- भोजन के बाद गरम पानी के साथ एक चम्मच हल्दी और चौथाई चम्मच हींग लें। जिन्हें पित्त की शिकायत हो वे हींग न लें।
- गरमागरम पानी पियें। भोजन के बाद बिस्तर पर न लेटें।
- सोंठ घिसकर माथे पर गुनगुना लेप करें (इससे खूब जलन होती है) और चार-चार बूंदें नाक में डालें।
- नाक में पांच-पांच बूंद तुलसी का रस डालें।

नींद न आने की शिकायत में

- नित्य रात में १/२ चम्मच मोटी सौंफ, पानी में घिसा हुआ जायफल एक चम्मच और मिश्री एक चम्मच लें।
- दोनों कलाइयों और पैरों पर ठंडे पानी में तर किया हुआ कपड़ा लपेटें।
- सिर पर ब्राह्मी, भृंगराज या पेठे का तेल लगायें। ब्राह्मी और भृंगराज का तेल तो बाजार में सहज ही मिल जाता है। पेठे का तेल भी 'हिमसागर' नाम से उपलब्ध है।
- पानी में घिसा हुआ जायफल १ चम्मच + १ कप दूध + १ चम्मच शक्कर रात में लें। जायफल की आदत पड़ जाती है, इसका ध्यान रहे।
- नरम बैंगन को भूनकर शहद लगाकर नित्य रात में लें।
- सोने से पूर्व सुगंध एवं संगीत का सेवन करें और मालिश करायें।

पथ्य (उचित आहार)

अन्न वर्ग- मसूर, पुराना सत्तू, गेहूं, साठी का चावल।
शाकवर्ग- चिचिंडा, परवल, करेला, चूका (चाकवत), सफेद या लाल पुनर्नवा।
फलवर्ग- अंगूर, अनार, ककड़ी।
मांसवर्ग- बकरा, मुर्गा, खरगोश, तीतर
द्विदल वर्ग- मूंग, कुलथी।
दुग्ध वर्ग- गाय का दूध, घी, मक्खन।
कंदवर्ग- सूरण (जिमीकंद), गाजर
अन्य- धनिया, सेंधा नमक, शहद शक्कर, हल्दी, जीरा।

अपथ्य (अनुचित आहार)

शाकवर्ग- कद्दू, ग्वालिन।
फलवर्ग- तरबूज, खट्टे फल।
मांसवर्ग- मछली, बगुला, बत्तख आदि जलचरों के मांस।
द्विदलवर्ग- अंकुरित दालें, उड़द, मटर।
दुग्ध वर्ग- दही।
कंदमूल- जड़ीली मूली, अरवी (घुइयां), लहसुन।
अन्य- पान, ज्यादा नमक, राब, कांजी, तिल, सरसों का तेल, बासी अन्न, नमकीन बिस्किट, शराब, गरमागरम मसालेदार चटपटा भोजन।

अपथ्य-विहार

दोपहर में तैरना, अत्यधिक क्रोध या शोक करना, अधोवायु, मल-मूत्र, उलटी व निद्रा को रोकना, बारीक अक्षरों को पढना, देर रात में भोजन करना।

रोमेलो मालवीय, लखनऊ

स्वादिष्ट करौंदा

भारतवर्ष के सभी मैदानी भागों की शुष्क, बलुई और पथरीली भूमि में भी उपजने वाली यह प्रसिद्ध वनस्पति सदा हरी-भरी रहती है। इसकी झाड़ी जमीन से ३-४ मी. तक ऊंची होती है। जिस पर नुकीले कांटें जोड़ी से लगते हैं। इसकी सख्त शाखाएं चारों ओर फैली हुई होती हैं। पत्ते २-५ से.मी. व्यास के अण्डाकार, नींबू के पत्तों की तरह होते हैं। इसमें ग्रीष्म ऋतु में सफेद रंग के फूल आते हैं। फल झरबेर के आकार के, १-३ सेमी. लम्बे अण्डाकार, जुलाई में आने लगते हैं। करौंदे के फल सफेदी युक्त लाल रंग के होते हैं और पकने पर यह बैंगनी-काले रंग के हो जाते हैं।

भाषा भेद से नाम

हिन्दी- करौंदा, बंगाली- करमचा, मराठी- करवंद, गुजराती- करगंदा, कन्नड़- करिजिगे, तेलगु- करवन्दे, लैटिन केरिसा- केरन्डस

उपयोग

कच्चे करौंदे को काट कर तरकारी के रूप में प्रयोग करते हैं। इसका उत्तम अचार और चटनी भी बनती है। पक्के करौंदे का मुरब्बा और जेली भी उत्तम गुणों वाली होती है। चीनी व इलायची मिला, पके करौंदे का स्वरस ठंडक देने वाला पेय होता है।

औषधीय उपयोग

- कच्चे करौंदे का अचार भूख बढ़ाता है और पाचन में सहायक होता है।
- गैस के कारण पेट फूलने पर और पेट में दर्द होने पर मूंग की दाल के सूप में कच्चे करौंदे और दही डालकर लेने से आराम मिलता है।
- धूप में अत्यधिक घूमने-फिरने, आग के पास देर तक बैठ कर काम करने से या भारी भोजन करने से बहुत प्यास लगती है और कितना भी पानी पीने पर प्यास नहीं जाती है। ऐसी स्थिति में ५-७ पके करौंदे चबा कर खायें और बीज थूक दें। इससे यह शिकायत दूर होती है।
- धूप में थोड़ा बहुत घूमने फिरने से या गर्मी के कारण नकसीर फटने पर, पके करौंदे खायें व बीज थूक दें। करौंदे को कूट कर उनका रस निकाल कर नाक में दो-दो बूंद डालें।

- मुंह का स्वाद बिगड़ने के कारण खाने की अनिच्छा रहने पर ८-१० पके करौंदे चबाकर बीज थूक दें। इससे मुंह का स्वाद ठीक हो जाता है।
- सिर भारी होने, सिर दर्द रहने, आंखों के भारी होने पर करौंदे की जड़ को पीस कर लेप करना चाहिए।
- अत्यधिक मद्य सेवन, लाल मिर्चों का अत्यधिक सेवन, धूप में घूमने फिरने आदि से जिन्हें पेशाब के रास्ते में जलन, पेशाब लाल होना, या खाने के समय गुदा में जलन अथवा मल के साथ रक्त निकलने की शिकायत हो तो भोजन के पूर्व ५-७ पके करौंदे खायें अवश्य लाभ होगा।
- पेट में जलन होने पर पूर्ण रूप से पके करौंदे खायें, आराम मिलता है।

निषेध

- कच्चे करौंदे ३-४ से ज्यादा न खायें इससे पेट में जलन होती है।
- करौंदे को साफ धोकर उसके ऊ की चेप निकाल दें अन्यथा गले में खरा खांसी और गले में छिलने की सी शिकाय होती है।
- करौंदे के बीज निकाल दें। अन्य पेट में दर्द और दस्त की शिकायत सम्भ है।
- करौंदे खाकर आइसक्रीम या दूध ले लें।

करौंदे की जेली

जेली बनाने के लिए फल ताजा तथा ठीक पका हुआ होना अति आवश्यक है। करौंदा जब आधा सफेद और आधा लाल रंग का हो जाता है उसी समय फल जेली बनाने के लिए सबसे अच्छा होता है। फलों को साफ पानी में धोकर, डंठल, फूल वाले भाग तथा दागी भाग को चाकू से काटकर अलग कर देना चाहिए। अब फलों को छोटे-छोटे टुकड़ों में काट कर बीज अलग कर दें। एक किलो फल को सवा लीटर पानी में डालकर लगभग एक घण्टे के लिए धीमी आंच पर चढ़ा दें और स्टेनलेस स्टील अथवा लकड़ी की करछुल से लगातार चलाते रहें। इससे फलों की गूदी घुलकर पानी में आ जाएगी। सफेद, साफ कपड़े में फलों का पका गूदा व पानी डालकर छानने के लिए किसी तार से टांग दें नीचे स्टील के साफ बरतन में इस को इकट्ठा करें। कभी भी गूदे को दबाकर रस न निकालें। ३-४ घण्टे में अपने आप रस निकल आएगा। इस रस को पुनः आंच पर चढ़ा दें और एक लीटर रस में औसतन ८०० ग्राम शक्कर डालें। शक्कर धीरे-धीरे डालकर चलाते रहें अन्यथा शक्कर नीचे जम जायेगी। शक्कर जब पूरी तरह घुल जाये तो एक उबाल देकर इस घोल को पुनः स्वच्छ बर्तन में छान लें ओर तेज आंच पर पकाएं, और बराबर चलाते रहें। यह रस आंच पर पक कर जैली का स्वरूप ले लेगा। जेली को आंच पर कब तक पकाया जाये यह बहुत महत्वपूर्ण है। इसके लिए एक चम्मच में थोड़ा सा पका रस लेकर हवा में घुमाकर ठंडाकर लिया जाता है और फिर यह देखा जाता है कि रस बूंद के रूप में गिरता है अथवा एक चौड़ी जेली की चादर के रूप में। यदि रस गिरने पर चादर गिरती है तो यह समझना चाहिए कि जेली तैयार हो गयी है।

तैयार जेली के ऊपर झाग एकत्र रहता है उसे चम्मच से हटाकर अलग कर देना चाहिए फिर गर्म जेली चौड़े मुंह की शीशियों में उड़ेलना चाहिए। शीशियों को गर्म पानी से धोकर पहले से सुखाकर रखना चाहिए। भरने से पहले शीशी में थोड़ी गर्म जेली डालकर, चम्मच से अन्दर की सतह पर जैली का लेप कर दें, इससे शीशी के टूटने का अंदेशा नहीं रहता है। जेली भरने के बाद शीशी को साफ कपड़े से ढक कर ठंडा होने को रख दें। ठंडी जेली पर साधारण मोम की एक पर्त जमा दी जाती है जिससे जेली का हवा से सम्पर्क समाप्त हो जाता है और इसे लम्बे समय तक रख सकते हैं।

रो.मा.

देशी चिकित्सा का अनुभव

लोरा गांव में तुकाराम पाडवी डेढ़ वर्षो से बीमार था। उसने कई डाक्टरों से इलाज करवाया पर लाभ नहीं हुआ। उसके लक्षण इस प्रकार थे-खाना हजम नहीं होता था, चलने फिरने में दम फूलता था और सुबह उठने और रात को सोते समय जबरदस्त खांसी के साथ बलग़म आता था।

मैंने उसको एक चम्मच बहेड़े के चूर्ण में थोड़ी सी हल्दी मिलाकर सुबह शाम 15 दिनों तक लेने को और तली हुई चीजों का अपथ्य बता दिया। उसकी खांसी और सांस लेने की तकलीफ ठीक हो गयी और वह बड़े आराम से अपना काम कर पा रहा है।

—

राम बाबू नाईक, धुले

कामला (पीलिया) की रोकथाम और उपचार

पीलिया मुख्यतया यकृत (जिगर, लीवर) की ऐसी बीमारी है जिसमें ऑखों, त्वचा एवं नाखून पर पीलापन आने लगता है। पीलिया की कुछ अवस्थाओं में मल-मूत्र भी गाढ़े पीले रंग का हो जाता है। एक अन्य अवस्था (अवरुद्ध या शाखाश्रित कामला) में मल का रंग मिट्टी के समान या सफेद हो जाता है। कामला में रोगी की भूख धीरे-धीरे खत्म होती जाती हैं, कमजोरी बढ़ती जाती है और रोग अधिक बढ़ने पर मूर्च्छा भी बार-बार आ सकती है। कभी-कभी रोगी को बुखार भी आता है।

कामला होने के निम्नलिखित कारण भारतीय चिकित्सकों ने बताए हैं-

- अधिक मद्यपान (शराब पीना)
- असात्म्य भोजन (शरीर जिसे हजम न कर सके)
- दूषित जल का सेवन
- अधिक खट्टे, नमकीन, चटपटे पदार्थों का सेवन
- बदलते मौसम में दिन में अधिक सोना
- पाण्डु रोग (एनीमिया)

यद्यपि चिकित्सकों ने इसके कई भेद बताए हैं, इसमें दो महत्वपूर्ण हैं। पहला वह जिसमें यकृत के विकार (विशेषकर उसमें कोई संक्रमण या मद्यपान आदि के कारण उसके कोषों का नाश आदि) होते हैं। दूसरे प्रकार का पीलिया यकृत से पित्त मार्ग में अवरोध (रुकावट- जैसे गांठ पड़ जाने, पथरी बन जाने आदि के कारण) पैदा हो जाने के कारण होता है। पहले प्रकार के कामला का इलाज शुरू में आसानी से किया जा सकता है, परन्तु दूसरे प्रकार के पीलिया में तो सामान्यतः सर्जरी/आपरेशन ही करना पड़ता है। यहां हम पहले प्रकार के कामला के कुछ सरल उपचारों एवं उससे संबद्ध आहार-विहार का वर्णन कर रहे हैं। ध्यान रहे कि यदि रोग बढ़ता जा रहा हो तो कुशल चिकित्सक की सलाह लेनी चाहिए। चूंकि यह एक कठिन रोग है इसलिए इसमें पूरी सतर्कता बरतनी चाहिए। भोजन व विश्राम आदि में थोड़ी सी भी लापरवाही करने से रोग बिगड़ सकता है अतः रोग के लक्षण बढ़ने से पहले से ही कुशल चिकित्सक से परामर्श करना चाहिए।

यहां हम कुछ घरेलू नुस्खों का जिक्र कर रहे हैं जिन्हें साधारणतया पीलिया में प्रयोग करने से लाभ होता है पर जैसा कि पहले लिखा है कि अवरुद्ध कामला या अन्य कुछ पेचीदगियों में यदि यह उपचार एक-दो दिन में लाभ न करे तो रोग के बढ़ने से पहले ही कुशल चिकित्सक से सम्पर्क करें।

कामला रोग की चिकित्सा- कुछ घरेलू नुस्खे

कामला रोग में 'पित्त' अधिक मात्रा में शरीर में बढ़ा होता है अतः इस बढ़ी हुई मात्रा को शरीर से बाहर निकालने के लिए भारतीय चिकित्सकों ने विरेचन का प्रयोग उत्तम बताया है। विरेचन कराने से टट्टी के साथ दूषित पित्त शरीर से बाहर निकल जाता है और चिकित्सा करने से लाभ होता है।

विरेचन कर्म के लिए हरड़ के चूर्ण की २ ग्राम की मात्रा दिन में एक बार शहद के साथ लेना चाहिए। यह मात्रा तीन या चार बार तक लें। हरीतकी चूर्ण के स्थान पर कुटकी का चूर्ण ५०० मिग्रा से १ ग्राम की मात्रा दिन में एक बार पानी के साथ ले सकते हैं।

इसके अलावा गुडुच का काढ़ा शहद के साथ या गुडुच सत्व की ५०० मिग्रा. से १ ग्राम की मात्रा शहद के साथ प्रतिदिन सुबह लेने से लाभ होता है।

ऑवला, हरड़, बहेड़ा का छिलका, गुडुच, अडूसा की पत्ती, कुटकी, चिरायता और नीम की छाल प्रत्येक की ३-३ ग्राम की मात्रा लेकर कूटकर, ४ गुने पानी में डालकर उबाल लें जब उबलते-उबलते पानी एक चौथाई बचे तब इसे छानकर ठण्डा कर १०-१५ मिली की मात्रा में शहद मिलाकर दोपहर व रात्रि में पीना चाहिए। यह क्वाथ काफी लाभकर है।

कामला रोग में पुनर्नवा का प्रयोग काफी लाभदायक होता है। पुनर्नवा का पंचांग (पूरा पौधा) लेकर उसे साफ करके उबलते पानी में डालकर ठण्डा करके फांट बनाकर रख लेना चाहिए। (फांट बनाने की विधि लगभग चाय बनाने जैसी होती है- कृपया ग्रीष्मांक देखें)। जब रोगी को प्यास लगे तो सामान्य पानी के स्थान पर पुनर्नवा का फांट शहद या चीनी मिलाकर देना चाहिए।

भुई आंवला (फाइलेंथस निरुरी) इसकी लगभग १५ ग्राम ताजा जड़ को गाय के दूध के साथ पीस व छानकर दिन में २ बार पिलाने से लाभ होता है। यह प्रयोग दक्षिण भारत में अधिक प्रचलित है।

मकोय (सोलेनम नाइग्रम) के पत्तों

का रस, मूली के रस में मिलाकर लगभग १०-१५ ग्राम प्रतिदिन पीने से लाभ होता है। यदि लाभ हो रहा हो तों औषधि का सेवन लगभग १० दिन तक किया जाता है।

अनन्त मूल (हेमीडेसमस इंडिकस) के जड़ की छाल २ ग्राम, काली मिर्च ११ नग, दोनों को लभगग २५ ग्राम पानी के साथ पीसकर दिन में तीन बार पिलाएं। रोग से पैदा होने वाली अरुचि व ज्वर को भी यह दूर करता है।

आक (किलोट्रोपिस- प्रोसेरा) का एक पत्ता साफ धोकर पोंछ लें। उस पर २०० मिग्रा खाने का चूना लगाकर बारीक पीसकर लुगदी बना लें। इसकी २ गोलियां बनाकर, दोनों गोलियों को प्रातः पानी के साथ लेने पर लाभ होता है।

गिलोय (टीनोस्पोरा कार्डिफोलिया)- गिलोय का २० ग्राम रस एक सप्ताह तक पीने से लाभ होता है।

पथ्य

परवल, चौलाई, पुनर्नवा के पत्ते, गुडुच (गिलोय) के पत्ते, पालक, बथुआ, कच्चा पपीता, मूली, गन्ने का रस, नींबू का रस, गाय का दूध या घी, मोसंबी तथा तक्र (मट्ठे) का सेवन लाभकारी होता है। कृपया उबाल कर ठंडा किया गया पानी ही पियें।

अपथ्य

धूम्रपान, वमन का रोकना, मैथुन, दिन में सोना, सरसों का तेल, हींग, उड़द की दाल, गर्म मसाला, दूषित जल, दही, शराब, घूमना फिरना, क्रोध करना, धूप का सेवन, ये सब कामला के रोगी के लिए नुकसानदेह है। कामला के रोगी को बिस्तर पर पूर्णतया आराम करना चाहिए।

(डा. निरंजन चन्द्र शाह, लखनऊ द्वारा प्रस्तुत लेख पर आधारित)

वर्षा में चर्म रोगों का उपचार

हकीम ए.बी. अल्वी और
एम.आर. किदवई, लखनऊ

भारतवर्ष में लोग बरसात का इंतजार बड़ी बेसब्री से करते हैं। जहां एक ओर यह गर्मी से राहत दिलाती है वहीं यह खेती के लिए भी महत्वपूर्ण है। पर बरसात में कीचड़ और गंदगी के साथ-साथ कई तरह की बीमारियां भी होती हैं। इस मौसम में खारिश-खुजली, फुंसी-फोड़े, दाद और अकौता मुख्य चर्म रोग हैं।

चर्म रोगों के कुछ घरेलू इलाज

- २ ग्राम कपूर को १० ग्राम तिल के तेल में मिलाकर खुजली की जगह दिन में तीन-चार बार लगाएं।
- नीम के पत्तों की लुग्दी (कल्क) लगाएं।
- पंवार (कैसियाटोरा) के ६ ग्राम बीजों के चूर्ण को २० ग्राम नारियल के तेल में मिला कर खुजली की जगह लगाएं।
- नहाने के लिए गुनगुने पानी का ही प्रयोग करें (पानी में नीम की पत्ती डालकर उबालें)
- मुंडी (स्फैरैंथस इंडिकस), चिरायता (स्वरशिया चिरायता) और अमर बेल (कुसकुटा रेफ्लेक्सा) तीनों के लगभग ६-६ ग्राम को २५० मि.ली. पानी में उबालें और यह काढ़ा (१०-१५ मिली) दिन में तीन बार लें।

फोड़े-फुंसी

निम्नलिखित नुस्खे लाभकारी हैं-

- नीम की छाल को पत्थर पर पानी डालकर घिसें। लेप को फुंसी पर लगाएं।
- तुख्मे-बलंगा (लालेमैंटिया रॉयलियाना) के बीजों में थोड़ा सा पानी मिला कर पुल्टिस बना ऐसे फोड़े पर बांधे जो न फूटता हो। २४ घण्टे में पका कर मवाद बाहर निकाल देगा। मवाद निकलने के बाद यह पुल्टिस न बांधें।
- एक प्याज की गांठ को आंच पर भूनें। मुलायम पड़ जाने पर फोड़े पर बांध दें। पकाकर उसका मवाद निकाल देगा।
- मवाद निकलने के बाद फोड़े को सुखाने के लिए २ ग्राम गंधक को ५ गुने नारियल के तेल में मिलाकर उसका लेप करें। इसी तरह कंपिला (कमेला-मेलोटस फिलिपाइनेन्सिस) के चूर्ण को पांच गुने तिल के तेल में मिलाकर भी लगाते हैं।

अकौता (एक्जीमा)

- अकौते की जगह लहसुन की गांठ के रस को नारियल के तेल में (समभाग) मिला कर लगाएं।
- नीम की छाल और काली मिर्च के बराबर-बराबर मात्रा के चूर्ण को सरसों के तेल (दोगुना मात्रा) में मिलाकर लगाएं।
- सत्यानासी (आर्जिमोन मेक्सिकाना) की जड़ के रस का लेप अकौता वाले चर्म पर करें।

विशेष

इन इलाजों के साथ जहां तक सम्भव हो नहाते समय साबुन न लगाएं। मांस, अंडे, मछली, कच्चे आम का परहेज करें।

दद्रु अर्थात् दाद

यह वर्षा ऋतु में होने वाला चर्म रोग है जिसमें स्त्री पुरुष के गुप्तांगों पर गोल-गोल चकत्ते हो जाते हैं जिनमें खूब खुजली होती है। चकत्तों का रंग अलसी के फूलों के समान काला-नीला अथवा तांबे सा ललछौंह होता है। इन चकत्तों के चारों ओर छोटी-छोटी फुन्सियां होती हैं। खुजलाने पर इन चकत्तों से पानी जैसा छूटता है और जहां जहां यह पानी फैलता है वहां व्याधि का विस्तार होता है। समुचित औषधि न करने पर बीमारी और खुजली बढ़ती है।

वर्षा ऋतु में इस रोग के फैलने का विशेष कारण यह है कि इस ऋतु में वायुमंडल की नमी की अधिकता के कारण पसीना सूख नहीं पाता। अतः व्यक्ति अपने गुप्तांगों को सूखा और स्वच्छ नहीं रख पाता। इस ऋतु में बरसात में भींगने के बाद गीले कपड़ों को पहने रहना इस रोग के होने का दूसरा विशेष कारण है।

इस रोग में शरीर का रक्त दूषित हो जाता है और वह मांस और त्वचा को भी दूषित कर देता है। अतः रोग दूर करने के लिए रक्त को शुद्ध करना आवश्यक है। इसके लिए नीम के पंचांग का काढ़ा १५-२० मिली. की मात्रा में सुबह शाम एक सप्ताह तक लेना चाहिए। परन्तु नीम के पंचांग के काढ़े का सेवन करना कठिन होने के कारण निम्न उपाय से रोग से मुक्त हुआ जा सकता है।

वर्षा ऋतु में भारत के उष्ण कटिबंधीय सभी क्षेत्रों में एक वनस्पति उगती है जिसे चकवंड, चकौंड, पंवाड या पमाड कहते हैं। इसका एक नाम दादमार भी है। इसे संस्कृत में चक्रमर्द, दद्रुघ्न आदि नामों से कहते हैं। अंग्रेजी में इसे रिंगवर्म प्लांट और लैटिन में कैसिया टोरा कहते हैं।

चकवंड के बीजों का कल्क और नीम के पत्तों का स्वरस तैयार कर लें। स्वरस से दाद वाले अंग को धोकर उस पर कल्क का लेप कर दें। यह प्रयोग एक सप्ताह तक करने से दाद समाप्त हो जाता है और पुनः नहीं होता।

(वैद्य सूर्य प्रकाश दीक्षित, लखनऊ द्वारा प्रस्तुत लेख पर आधारित)

गर्भावस्था- आहार विहार

डा. शैल कुमारी

गर्भावस्था प्रत्येक स्त्री के लिए एक सुखद अनुभूति देने वाला समय होता है। गर्भधारण के इन नौ महीनों में प्रत्येक स्त्री में स्वाभाविक रूप से कुछ परिवर्तन होते हैं जिनके कारण सामान्य रूप से प्रयुक्त आहार-विहार उनकी कमियों को पूरा नहीं कर पाता अतः स्त्री के लिए ऐसे समय में विशेष प्रकार के आहार-विहार की आवश्यकता पड़ती है। यदि इसके ऊपर ध्यान नहीं दिया जाता तो उनमें अनेक प्रकार की बीमारियां पैदा हो सकती हैं जिनका प्रभाव माता के स्वास्थ्य पर पड़ता है तथा माता के गर्भ में पल रहा बच्चा भी इन दुष्प्रभावों से प्रभावित हो जाता है और पैदा होने के बाद भी बच्चों को अनेक बीमारियां हो सकती हैं। इस कारण गर्भिणी स्त्री के लिए उत्तम वातावरण, सही रहन-सहन एवं उपयुक्त आहार-विहार का एक संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है :-

गर्भिणी स्त्री की दैनिक परिचर्या

गर्भिणी स्त्री को हमेशा खुश रहना चाहिए। उसके घर वालों को चाहिए कि ऐसा वातावरण बनाये रखें कि स्त्री को क्रोध या उसके स्वभाव में चिड़चिड़ापन न आए। उसे ऐसी किताबें या पत्र-पत्रिकाएं पढ़नी चाहिए कि मन प्रसन्न रहे। इसके लिए महापुरुषों की जीवन गाथाएं, उनके चरित्र, धार्मिक ग्रन्थ तथा अच्छी कहानियां ठीक रहती हैं। यदि स्त्री को संगीत का शौक अथवा अन्य मनोरंजन की इच्छा हो तो उनका प्रबन्ध यथासम्भव अवश्य करना चाहिए। गर्भवती स्त्री की इच्छाएं अक्सर गर्भस्थ शिशु की इच्छाओं की अभिव्यक्ति होती है। अतः उसकी पूर्ति भावी संतान की इच्छापूर्ति समझ कर भी करनी चाहिए।

गर्भिणी को सुबह जल्दी सोकर उठ जाना चाहिए और दैनिक नित्य क्रियाएं जैसे मुंह धोना, दातून, शौच तथा स्नान करके उत्तम वस्त्र धारण कर सुबह का रुचिकर नाश्ता करना चाहिए। दोपहर में थोड़ा विश्राम अवश्य करें। सायंकाल यदि सम्भव हो तो अध्ययन या सत्संग उत्तम रहता है। (शेष पृष्ठ ३१ पर)

गर्भिणी की विशेष आहार व्यवस्था

प्रथम मास	-	ठंडा दूध बार-बार दें।
	-	मीठा, ठंडा तथा पतला आहार प्रातः सायं प्रयोग करना चाहिए।
द्वितीय मास	-	पलाश जैसी मधुर औषधियों से दूध दें।
तृतीय मास	-	दूध में घी और शहद मिलाकर दें।
	-	साठी का चावल दूध के साथ दें।
चतुर्थ मास	-	दूध में मक्खन मिलाकर दें।
	-	साठी का चावल दही के साथ दें।
	-	जांगल मांस के साथ हितकर लगने वाला भोजन करना चाहिए।
पंचम मास	-	दूध और घी मिलाया हुआ अन्न दें।
	-	साठी का चावल दूध के साथ दें।
षष्ठ मास	-	गोखरू से पकाया हुआ घी या चावल का खट्टा मांड पिलायें।
	-	घी के साथ साठी के चावल दें।
सप्तम मास	-	पृश्निपर्णी (पिठवन) मूल से सिद्ध घी पिलायें।
	-	मधुर औषधियों से सिद्ध घी तथा दूध का सेवन करना चाहिए।
अष्टम मास	-	चावल के मांड में दूध और घी मिलाकर दें इसे क्षीर यवागू कहते हैं।
	-	कनेर, बला, अतिबला, सौंफ, दूध, दही का पानी, तेल, लवण, मैनफल, शहद और घी मिलाकर बस्ति दें।
नवम मास	-	मधुर औषधियों से सिद्ध तेल तथा यवागू में घी डालकर दें।
	-	योनि में तिल तेल से भीगा रुई का फाहा धारण करने से प्रसव मार्ग का स्नेहन होता है।

उत्तर-भारत पारम्परिक चिकित्सक सम्मेलन : एक रिपोर्ट

ज्वर की रोकथाम एवं उपचार संबंधी कुछ अनुभव

गत ६ से ९ मार्च तक चित्रकूट (जि. बांदा) के पारम्परिक एवं धार्मिक स्थल पर लोक स्वास्थ्य परम्परा संवर्धन समिति के तत्वावधान में विज्ञान शिक्षा केन्द्र ने पारम्परिक चिकित्सकों का एक सम्मेलन किया था। इस सम्मेलन में विशेषकर उत्तर भारत के (कुछ अन्य प्रदेशों के भी) लगभग १७५ चिकित्सकों, समाज सेवकों आदि ने भाग लिया था। चार दिन के इस सम्मेलन में अन्य विषयों के अलावा ज्वर के निदान, उसकी चिकित्सा एवं रोकथाम पर विशेष चर्चा हुइ। इस बैठक में लोगों ने इस सम्बन्ध में अपने अनुभवों का वर्णन किया, इस पर आधारित कुछ तत्य यहां प्रस्तुत हैं।

यद्यपि आयुर्वेद में और लोक परम्पराओं में भी ज्वर के कई प्रकारों का वर्णन किया गया है। यहां पर हम रोकथाम और उपचार दोनों ही के विचार से साधारण ज्वर के कारणों, लक्षणों एवं उनके उपचार का वर्णन कर रहे हैं।

साधारण ज्वर के लक्षण एवं कारण

साधारणतः ज्वर में शरीर का (और विशेषकर त्वचा का) तापमान बढ़ जाता है। पूरे शरीर में दर्द व जकड़न रहती है, अरुचि एवं भूख न लगने की शिकायत भी रहती है। जहां मलेरिया जैसे विषमज्वरों में सर्दी और कंपकंपी लगती है वहीं अन्य लक्षणों में होंठ और मुंह सूखता है और मुंह का स्वाद खराब हो जाता है तथा कब्ज की शिकायत होती है। ज्वर आने के मुख्य कारण निम्न हैं-

- आगंतुक कारण जैसे मलेरिया, टाइफाइड, निमोनिया आदि में या चोट लगने के कारण।
- विष के सेवन से ज्वर।
- प्रसव के दौरान (सूतिका) ज्वर

काफी समय तक रहने वाले ज्वर को जीर्ण ज्वर कहते हैं।

ज्वर की रोकथाम और उपचार:

सर्दी लगने के कारण या मलेरिया के कुछ उपचार इस प्रकार हैं-

- काली तुलसी के ५ पत्ते कालीमिर्च के दो दानों के साथ पीस लें और गर्म पानी के साथ देने से ज्वर की रोकथाम और उपचार दोनों में ही लाभ होता है।
- किसी भी ज्वर के लक्षण शुरू होने पर नींबू का रस गुनगुने पानी के साथ देने से लाभ होता है।
- करंज (पोंगामिया ग्लेब्रा) के बीज का गूदा (२००-५०० मिग्रा) गुड़ के साथ लेने से मलेरिया में लाभ करता है।
- चिरायता (स्वर्शिया किराता) का काढ़ा (१० ग्राम चिरायता का पंचाग लगभग ८० मि.ली. पानी में उबालें- २० मि.ली. रह जाने पर ठंडा करें और चीनी के साथ दिन में ३ बार लें) मलेरिया या बदलते मौसम के बुखार में अधिक लाभकारी है।

विशेष

ध्यान रहे कि ज्वर किसी अन्य बीमारी का लक्षण होता है अतः उपचार से शीघ्र ठीक न होने की स्थिति में या बढ़ने की स्थिति में तुरंत कुशल चिकित्सक को सम्पर्क करें। बुखार १०२ डिग्री फा. से अधिक होने पर पूरे शरीर में और माथे पर ठंडे पानी की पट्टी रखें और बुखार न बढ़ने दें- कुशल चिकित्सक को सम्पर्क करें।

(पृष्ठ ३० का शेष)

गर्भिणी स्त्री की दैनिक परिचर्या ...

रात का भोजन यथाशीघ्र करके जल्दी सोना चाहिए। दिन की समस्त चिंताओं और बुरे ख्यालों को भूल कर सुखपूर्वक सोना स्वास्थ्य के लिए अच्छा है। साफ-सुथरे बिस्तर पर नींद अच्छी आती है। यदि गर्मी पड़ रही हो तो पंखा चलाकर हल्की चादर ओढ़कर सोना चाहिए।

फूलों के बगीचे में सुगन्धित वातावरण में टहलना स्वास्थ्य के लिए अच्छा है। अथवा नदी या झील के आस-पास घूमने जाना चाहिए।

गर्भिणी के लिए भोजन व्यवस्था

विहार के साथ-साथ गर्भिणी के आहार पर भी विशेष ध्यान देना चाहिए। इसके लिए शास्त्रों में सामान्य भोजन के साथ प्रत्येक मास में कुछ विशेष आहार की व्यवस्था की गयी है।

गर्भिणी के लिए सावधानियां

गर्भवती स्त्री को क्रोध तथा चिन्ता नहीं करनी चाहिए। स्वभाव में चिड़चिड़ापन स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है। दिन में अधिक सोना या थकाने वाला व्यायाम नहीं करना चाहिए। गंदे वस्त्र, कष्टदायी शैय्या व अश्लील साहित्य से बचें। इस काल में पुरुष सम्पर्क यथासम्भव कम करना चाहिए। भारी या कठिनाई से पचनेवाला भोजन हानिकर है। यदि पानी बरस रहा हो तो घर से बाहर नहीं निकलना चाहिए।

हाथ की ये पाँच उँगलियाँ:
जब मिलें तो मुट्ठी बनें और शक्ति कहलायें! जैसे...

झंडु पंचारिष्ट

पाँच आयुर्वेदिक टॉनिकों का
अनोखा मिश्रण जो आपकी
पाचनक्रिया को एकदम दुरुस्त रखता है.

हाज़मा खराब,
तो सेहत का सत्यानाश.
इसीलिए झंडु पंचारिष्ट
का नियमित सेवन आवश्यक
है. झंडु पंचारिष्ट में पांच
महत्त्वपूर्ण आसवों और
अरिष्टों का मिश्रण है, और
इन पांचों के मेल से बनता
है एक ऐसा अनोखा असरदार
टॉनिक, जो तमाम पाचनक्रिया
को स्वस्थ रखे, सेहत बनाए.
और आप तो जानते ही हैं:
जान है तो जहान है.

झंडु पंचारिष्ट
पाँच औषधियों वाला पाचक टॉनिक
अब २०० मिली के नये पैक में भी

ZP/18/124 HN

श्री विन्ध्या पेपर मिल्स लि.

की

शुभकामनाओं सहित

इण्डियन मर्केन्टाइल चैम्बरस
तीसरी मंजिल, १४ आर. कमानी मार्ग
बल्लार्ड एस्टेट
बम्बई-४०००३८

रजिस्ट्रेशन नं. ०७५९८५/४०/३६/ए.एल./८९-टी.सी.

ऋतुएं और हमारा स्वास्थ्य

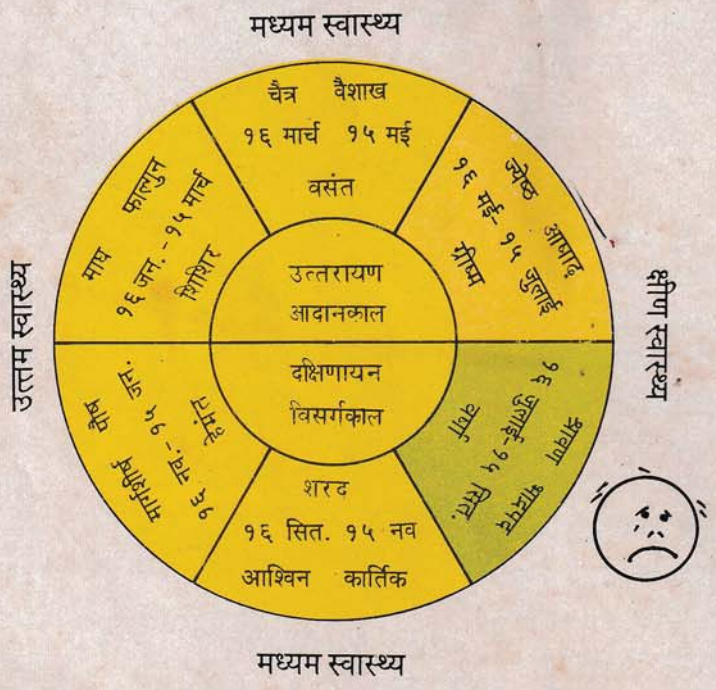

आदावन्ते च दौर्बल्यं विसर्गादानयोर्नृणाम् ।
मध्ये मध्यबलं त्वन्ते श्रेष्ठमग्रे विनिर्दिशेत् ।।
-च.सू. ६.८